बादर बरस गयो

लेखक

'नी र ज'



१९५८

आत्माराम एण्ड संस

प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता

काश्मीरी गेट

दिल्ली-६

लेखक की अन्य रचनाएँ

दर्द दिया है	४.५०
प्राण-गीत	३.००
आसावरी	प्रेस मे
दो गीत	प्रेस मे
प्रारम्भिका	प्रेस में

प्रकाशक
रामलाल पुरी
संचालक
आत्माराम एण्ड संस
काश्मीर गेट
दिल्ली-६

मूल्य ३.००

मुद्रक
यूनीक प्रेस
चावडी बाजार
दिल्ली-६

बहन इन्दिरा गांधी को

पर यही अपराध मैं हर बार करता हूँ,
आदमी हूँ, आदमी से प्यार करता हूँ।

विषय-सूची

१

सुख के साथी मिले हज़ारो ही लेकिन,
दुख मे साथ निभाने वाला नही मिला।

जब तक रही बहार उमर की बगिया में,
जो भी आया द्वार, चाँद लेकर आया,
पर जिस दिन झर गयी गुलाबो की पँखुरी,
मेरा आँसू मुझ तक आते शरमाया,
जिसने चाहा मेरे फ़ूलो को चाहा,
नही किसी ने लेकिन शूलो को चाहा,
मेला साथ दिखाने वाले मिले बहुत,
सूनापन बहलाने वाला नही मिला।

सुख के साथी

कोई रँग-बिरगे कपडो पर रीझा,
मोहा कोई मुखडे की गोराई से,
लुभा किसी को गयी कठ की कोयलिया,
उलझा कोई काजल की कजराई से,
जिसने देखी बस मेरी डोली देखी,
नही किसी ने पर दुलहिन भोली देखी,
तन के तीर तैरने वाले मिले सभी,
मन के घाट नहाने वाला नही मिला।

सुख के साथी·····

मैं जिस दिन सोकर जागा मैंने देखा,
मेरे चारो ओर ठगो का जमघट है,
एक इधर से एक उधर से लूट रहा,
छिन-छिन रीत रहा मेरा जीवन-घट है,
सबकी आँख लगी थी गठरी पर मेरी,
और मची थी आपस में मेरा-तेरी,
जितने मिले सभी बस धन के चोर मिले,
लेकिन हृदय चुराने वाला नही मिला।
सुख के साथी

रूठी सुबह डिठौना मेरा छुड़ा गयी,
गयी ले गयी तरुणाई सब दोपहरी,
हँसी खुशी सूरज-चन्दा के बाँट पड़ी,
मेरे हाथ रही केवल रजनी गहरी,
आकर जो लौटा कुछ लेकर ही लौटा,
छोटा और हो गया यह जीवन छोटा,
चीर घटाने वाले ही सब मिले यहाँ,
घटता चीर बढाने वाला नही मिला।
सुख के साथी

उस दिन जुगनू एक अन्धेरी बस्ती मे,
भटक रहा था इधर-उधर भरमाया सा,
आसपास था अन्तहीन बस अँधियारा
केवल था शिर पर निज लौ का साया सा,
मैंने पूँछा तेरी नींद कहाँ खोई
वह चुप रहा, मगर उसकी ज्वाला रोई—
"नींद चुराने वाले ही तो मिले यहाँ,
कोई गोद सुलाने वाला नही मिला।"
सुख के साथी

२

प्राण ! पहले तो हृदय तुमने चुराया
छीन ली अब नींद भी मेरे नयन की।

बीत जाती रात हो जाता सवेरा,
पर नयन पंछी नहीं लेते बसेरा,
बंद पंखों में किये आकाश-धरती
खोजते फिरते अँधेरे का उजेरा,
पंख थकते, प्राण थकते, रात थकती
खोजने की चाह पर थकती न मन की।
छीन ली अब नींद भी मेरे नयन की।

स्वप्न सोते स्वर्ग तक अंचल पसारे,
डाल कर गल-बाँह भू, नभ के किनारे,
किस तरह सोऊँ मगर मैं पास आकर
बैठ जाते हैं उतर नभ से सितारे,
और हैं मुझको सुनाते वह कहानी
है लगा देती झड़ी जो अश्रु घन की।
छीन ली अब नींद भी मेरे नयन की।

सिर्फ क्षण भर तुम बने मेहमान घर में,
पर सदा को बस गये बन याद उर में,
रूप का जादू दिया वह डाल मुझ पर
आज मैं अनजान अपने ही नगर में,
किन्तु फिर भी मन तुम्हे ही प्यार करता
क्या करूँ आदत पड़ी है बालपन की।
छीन ली अब नींद भी मेरे नयन की।

पर न अब मुझको रुलाओ और ज्यादा,
पर न अब मुझको मिटाओ और ज्यादा,
हूँ बहुत मैं सह चुका उपहास जग का
अब न मुझ पर मुस्कराओ और ज्यादा,
धैर्य का भी तो कही पर अन्त है प्रिय!
और सीमा भी कही पर है सहन की।
छीन ली अब नींद भी मेरे नयन की।

३

"जी उठे शायद शलभ इस श्रास मे
रात भर रो रो दिया जलता रहा।"

थक गया जब प्रार्थना का पुण्य, बल,
सो गई जब साधना होकर विफल,
जब धरा ने भी नही धीरज दिया,
व्यग जब आकाश ने हँसकर किया,
आग तब पानी बनाने के लिये—
रात भर रो रो दिया जलता रहा।

"जी उठे शायद शलभ इस श्रास मे
रात भर रो रो दिया जलता रहा।"

बिजलियो का चीर पहने थी दिशा,
आँधियो के पर लगाये थी निशा,
पर्वतो की बाँह पकडे था पवन,
सिन्धु को सर पर उठाये था गगन,
सब रुके, पर प्रीति की अर्थी लिये
आँसुओ का कारवाँ चलता रहा।

"जी उठे शायद शलभ इस आस में
रात भर रो रो दिया जलता रहा।"

कांपता तम, थरथराती लौ रही,
आग अपनी भी न जाती थी सही,
लग रहा था कल्प सा हर एक पल,
बन गई थीं सिसकियां सांसें विकल,
पर न जाने क्यों उमर की डोर में
प्राण बँध तिल तिल सदा गलता रहा ?
"जी उठे शायद शलभ इस आस मे
रात भर रो रो दिया जलता रहा।"

सो मरण की नीद निशि फिर फिर जगी,
शूल के शव पर कली फिर फिर उगी,
फूल मधुपो से बिछुडकर भी खिला,
पन्थ पन्थी से भटक कर भी चला,
पर बिछुड कर एक क्षण को जन्म से
आयु का यौवन सदा ढलता रहा।
"जी उठे शायद शलभ इस आस में
रात भर रो रो दिया जलता रहा।"

धूल का आधार हर उपवन लिये,
मृत्यु से शृंगार हर जीवन किये,
जो अमर है वह न धरती पर रहा,
मर्त्य का ही भार मिट्टी ने सहा,
प्रेम को अमरत्व देने को मगर,
आदमी खुद को सदा छलता रहा।
"जी उठे शायद शलभ इस आस मे
रात भर रो रो दिया जलता रहा।"

४

जिन्दगी न तृप्ति है, न प्यास है
क्योंकि पिया दूर है न पास है।

बढ रहा शरीर, आयु घट रही,
चित्र बन रहा, लकीर मिट रही,
आ रहा समीप लक्ष्य के पथिक,
राह किन्तु दूर दूर हट रही,
इसलिये सुहागरात के लिये—
आँख मे न अश्रु है, न हास है।

जिन्दगी न तृप्ति है, न प्यास है
क्योंकि पिया दूर है न पास है।

गा रहा सितार, तार रो रहा,
जागती है नींद, विश्व सो रहा,
सूर्य पी रहा समुद्र की उमर,
और चाँद बूँद बूँद हो रहा,
इसलिये सदैव हँस रहा मरण,
इसलिये सदा जनम उदास है।

जिन्दगी न तृप्ति है, न प्यास है
क्योंकि पिया दूर है न पास है।

बूँद गोद मे लिये अँगार है,
ओठ पर अँगार के बहार है,
धूल मे सिंदूर फल का छिपा,
और फूल धूल का सिंगार है,
इसलिए विनाश है सृजन यहाँ,
इसलिये सृजन यहाँ विनाश है।
जिन्दगी न तृप्ति है, न प्यास है
क्योंकि पिया दूर है न पास है।

व्यर्थ रात है अगर न स्वप्न है,
प्रात धूर, जो न स्वप्न भग्न है,
मृत्यु तो सदा नवीन जिन्दगी,
अन्यथा शरीर लाश नग्न है,
इसीलिये अकास पर जमीन है,
इसलिये जमीन पर अकास है।
जिन्दगी न तृप्ति है, न प्यास है
क्योंकि पिया दूर है न पास है।

दीप अँधवार से निकल रहा,
क्योंकि तम बिना सनेह जल रहा,
जी रही सदेह मृत्यु जो रही,
क्योंकि आदमी अदेह ढल रहा,
इसलिये सदा अजेय धूल है,
इसलिये सदा विजेय श्वास है।
जिन्दगी न तृप्ति है, न प्यास है
क्योंकि पिया दूर है न पास है।

मुहूरत निकल जायेगा···

५

देखती ही न दर्पण रहो प्राण ! तुम
प्यार का यह मुहूरत निकल जायेगा ।

साँस की तो बहुत तेज़ रफ़्तार है,
और छोटी बहुत है मिलन की घड़ी,
आँजते आँजते ही नयन-बावरे,
बुझ न जाये कहीं उम्र की फुलझड़ी,
सब मुसाफ़िर यहाँ, सब सफ़र पर यहाँ,
ठहरने की इजाज़त किसी को नहीं,
केश ही तुम न बैठी गुँथाती रहो,
देखते देखते चाँद ढल जायेगा ।
देखती ही न दर्पण रहो प्राण
प्यार का यह मुहूरत निक

झूमती गुनगुनाती हुई यह हवा,
कौन जाने कि तूफान के साथ हो,
क्या पता इस निदासे गगन के तले
यह हमारे लिये आखिरी रात हो,

ज़िन्दगी क्या—समय के बियावान मे
एक भटकी हुई फूल की गध है,
चूडियाँ ही न तुम खनखनाती रहो,
कल दिये को सबेरा निगल जायेगा ।

देखती ही न दर्पण रहो प्राण ! तुम
प्यार का यह मुहूरत निकल जायेगा ।

यह महकती निशा, यह बहकती दिशा,
कुछ नही, है शरारत किसी शाम की,
चाँदनी की चमक, दीप की यह दमक,
है हँसी बस किसी एक बेनाम की,

है लगी होड दिन-रात मे प्रिय! यहाँ,
धूप के साथ लिपटी हुई छाँह है,
वस्त्र ही तुम बदल कर न आती रहो,
यह शरमसार मौसम बदल जायेगा ।

देखती ही न दर्पण रहो प्राण ! तुम
प्यार का यह मुहूरत निकल जायेगा

होठ पर जो सिसकते पड़े गीत यह,
एक आवाज़ के सिर्फ महमान हैं,
ऊँघती पुतलियों में जड़े जो सपन,
वे किन्ही आँसुओं से मिले दान हैं,

कुछ न मेरा न कुछ है तुम्हारा यहाँ,
कर्ज़ के व्याज पर सिर्फ हम जी रहे,
माँग ही तुम न बैठी सजाती रहो,
आ गया जो महाजन न टल पायेगा।

देखती ही न दर्पण रहो प्राण ! तुम
प्यार का यह मुहूरत निकल जायेगा।

कौन शृंगार पूरा यहाँ कर सका ?
सेज जो भी सजी सो अधूरी सजी,
हार जो भी गुंथा सो अधूरा गुंथा,
बीन जो भी बजी सो अधूरी बजी,

हम अधूरे, अधूरा हमारा सृजन,
पूर्ण तो एक बस प्रेम ही है यहाँ,
काँच से ही न नजरें मिलाती रहो,
बिम्ब को मूक प्रतिबिम्ब छल जायेगा।

देखती ही न दर्पण रहो प्राण ! तुम
प्यार का यह मुहूरत निकल जायेगा।

६

तुम आये कण-कण पर बहार आयी
तुम गये,गयी झर मन की कली-कली।

तुम बोले पतझर मे कोयल बोली,
बन गयी पिघल गुँजार भ्रमर-टोली,
तुम चले चल उठी वायु रूप-वन की
झुक झूम-झूम कर डाल-डाल डोली,
मायावी घूंघट उठते ही क्षण में
रुक गया समय,पिघली दुख की बदली।
तुम गये,गयी झर मन की कली-कली॥

रेशमी रजत मुस्कानो में रँगकर,
तारे बनकर छा गये अश्रु तम पर,
फँस उरझ उनींदे कुन्तल-जालों मे,
उतरा धरती पर ही राकेन्दु मुखर,
बन गयीं अमावस पूनों सोने की,
चांदी से चमक उठे पथ गली-गली।
तुम गये,गयी झर मन की कली-कली॥

तुमने निज नीलांचल जब फैलाया,
दोपहरी मेरी बनी तरल छाया,
लाजारुण ऊषा झांकी झुरमुट से,
निज नयन ओट तुमने जब मुस्काया,
घुंघरु-सी गमक उठी सूनी सध्या,
चचल पायल जब आंगन मे मचली ।
तुम गये,गयी झर मन की कली-कली॥

हो चले गये जब से तुम मनभावन !
मेरे आंगन मे लहराता सावन,
हर समय बरसती बदली-सी आंखे,
जुगनू-सी इच्छायें बुझती उन्मन,
बिखरे हैं बूंदो से सपने सारे,
गिरती आशा के नीडो पर बिजली ।
तुम गये,गयी झर मन की कली-कली ॥

७

रूप की इस काँपती लौ के तले
यह हमारा प्यार कितने दिन चलेगा ?

नील-सर मे नीद की नीली लहर,
खोजती है भोर का तट रात भर,
किंतु आता प्रात जब गाती ऊषा,
बूँद बन कर हर लहर जाती बिखर,
प्राप्ति हो जब मृत्यु है अस्तित्व की,
यह हृदय व्यापार कितने दिन चलेगा ?
रूप की इस काँपती लौ के तले
यह हमारा प्यार कितने दिन चलेगा ?

'ताज' यमुना से सदा कहता अभय—
"काल पर मैं प्रेम-यौवन की विजय"
बोलती यमुना—"अरे तू क्षुद्र क्या—
एक मेरी बूँद मे डूबा प्रणय",
जी रही जब एक जल-कण पर तृषा,
तृप्ति का आधार कितने दिन चलेगा ?
रूप की इस काँपती लौ के
यह हमारा प्यार कितने दिन चले

स्वर्ग को भू की चुनौती सा अमर,
है खड़ा जो वह हिमालय का शिखर,
एक दिन हो भूविलुंठित गल-पिघल,
जल उठेगा बन मरुस्थल अग्नि-सर,
थिर न जब सत्ता पहाड़ो की यहाँ,
अश्रु का शृंगार कितने दिन चलेगा ?

रूप की इस कांपती लौ के तले
यह हमारा प्यार कितने दिन चलेगा ?

गूँजते थे फूल के स्वर कल जहाँ,
तैरते थे रूप के बादल जहाँ,
अब गरजती रात सुरसा-सी खड़ी,
घन-प्रभंजन की अनल-हलचल वहाँ,
काल की जिस बाढ़ मे डूबी प्रकृति,
श्वास का पतवार कितने दिन चलेगा ?

रूप की इस कांपती लौ के तले
यह हमारा प्यार कितने दिन चलेगा ?

विश्व भर मे जो सुबह लाती किरण,
साँझ देती है वही तम को शरण,
ज्योति सत्य, असत्य तम फिर भी सदा,
है किया करता दिवस निशि को वरण,
सत्य भी जब थिर नही निज रूप में,
स्वप्न का संसार कितने दिन चलेगा ?

रूप की इस कांपती लौ के तले
यह हमारा प्यार कितने दिन चलेगा ?

मरण-त्योहार...



पथिक ! ठहरने का न ठौर जग, खुले पडे सब द्वार,
और डोलियो का घर घर पर लगा हुआ बाजार,
जन्म है यहाँ मरण-त्योहार ।

देख ! धरा की नग्न लाश पर नीलाकाश खडा है,
सागर की शीतल छाती मे ज्वालामुखी जडा है,
सूर्य उठाये हुये चाँद की अर्थी निज कधो पर,
और कली के सम्मुख उपवन का ककाल पडा है,
खा खाकर निज आयु जो रही जीवन की वैदेही,
रे ! विष पीकर नही, अमृत पीकर मरता ससार ।
जन्म है यहाँ मरण-त्योहार ।

आँजे हुये नीद का काजल सब अँखियाँ कजरारी,
आलिगन कर रही मृत्यु का बाँहें प्यारी प्यारी,
कोई कही रहे पर सबकी मजिल एक यहाँ पर,
रे ! मर्घट की ओर मुडी हैं राहे जग की सारी,
एक दिवस आती है सबके जीवन में मजबूरी,
और एक दिन मिट्टी सबका करती है शृगार।
जन्म है यहाँ मरण-त्योहार ।

काल-तिमिर के नागफास मे वन्दी किरन-परी है,
और फूल के नन्हे से दिल पर चट्टान धरी है,
घिरी आग की लाल वदरिया तरु तरु पर उपवन के,
पात पात पर अगारो की धूप - छाँह छितरी है,
नीड नीड पर वज्र-विजलियो की आँधी मँडराती,
तृण तृण मे करवटें ले रहा मरथल का पतझार।
जन्म है यहाँ मरण-त्यौहार।

लिये गोद में नाश, मर रही जीकर यहाँ अमरता,
घृणित चिता की राख छिपाये जग भर की सुन्दरता,
दवा लकडियो के नीचे पुरुपार्थ पार्थ का सारा,
अरे! कृष्ण पर क्षुद्र वधिक का तीर व्यग सा करता,
हाय! राम का शव सरयू में नगा तैर रहा है,
सीता का सिन्दूर अवध में करता हाहाकार।
जन्म है यहाँ मरण-त्यौहार।

लगा हुआ हर एक यहाँ जाने की तैयारी में,
भरी हुई हर गैल, चल रहे पर सव लाचारी में,
एक एक कर होती जाती खाली सभी सरायें,
एक एक कर विछुड रहे सव मीत उमर वारी में,
और कह रही रो रो कर सव सूनी सेज अटरियाँ—
"सदियों का सामान किया क्यों ? रहना था दिन चार"।
जन्म है यहाँ मरण-त्यौहार।

मत करो प्रिय ! रूप का अभिमान,
कब्र है धरती, कफ़न है आसमान।

हर पखेरू का यहाँ है नीड़ मरघट पर,
है बँधी हर एक नैया मृत्यु के तट पर,
खुद बखुद चलती हुई यह देह अर्थी है,
प्राण है प्यासा पथिक ससार पनघट पर,
किसलिये फिर प्यास का अपमान ?
जी रहा है प्यास पी पी कर जहान।

मत करो प्रिय ! रूप का अभिमान,
कब्र है धरती, कफ़न है आसमान।

भूमि से, नभ से, नरक से, स्वर्ग से भी दूर,
हो कहीं इन्सान पर है मौत से मजबूर,
धूर सब कुछ इस मरण की राजधानी में,
सिर्फ अक्षय है किसी की प्रीति का सिन्दूर,
किसलिये फिर प्यार का अपमान ?
प्यार है तो ज़िन्दगी हरदम जवान।

मत करो प्रिय ! रूप का अभिमान,
कब्र है धरती, कफ़न है आसमान।

रंक-राजा, मूर्ख-पंडित, रूपवान-कुरूप,
साँझ के आधीन सब की जिन्दगी की धूप,
आखिरी सब की यहाँ पर है चिता ही सेज,
धूल ही शृंगार अन्तिम, अन्त-रूप अनूप,
किसलिये फिर धूल का अपमान ?
धूल हम तुम, धूल है सब की समान।

मत करो प्रिय ! रूप का अभिमान,
कब्र है धरती, कफन है आसमान।

एक भी देखा न ऐसा फूल इस जग मे,
जो नही पथ पर चुभा हो शूल वन पग मे,
सब यहीं छूटा पिया घर जब चली डोली,
एक आँसू ही रहा बस साथ दृग-मग में,
किसलिये फिर अश्रु का अपमान ?
अश्रु जीवन में अमृत से भी महान।

मत करो प्रिय ! रूप का अभिमान,
कब्र है धरती, कफन है आसमान।

प्राण ! जीवन क्या क्षणिक बस साँस का व्यापार,
देह की दूकान जिस पर काल का अधिकार,
रात को होगा सभी जब लेन-देन समाप्त,
तब स्वयं उठ जायगा यह रूप का बाजार,
किसलिये फिर रूप का अभिमान ?
फूल के शव पर खड़ा है बाग़बान।

मत करो प्रिय ! रूप का अभिमान,
क़ब्र है धरती, कफ़न है आसमान।

१०

आज न कोई दूर न कोई पास है,
फिर भी जाने क्यों मन आज उदास है?

आज न सूनापन भी मुझसे बोलता,
पात न पीपल पर भी कोई डोलता,
ठिठकी-सी है वायु, थका-सा नीर है,
सहमी - सहमी रात, चाँद गम्भीर है,
गुपचुप धरती, गुमसुम सब आकाश है।
फिर भी जाने क्यों मन आज उदास है?

आज शाम को भरी नहीं कोई कली,
आज अँधेरी नहीं रही कोई गली,
आज न कोई पन्थी भटका राह में,
जल पपीहा आज न प्रिय की चाह में,
आज नहीं पतझार, नहीं मधुमास है।
फिर भी जाने क्यों मन आज उदास है?

आज अधूरा गीत न कोई रह गया,
चुभने वाली बात न कोई कह गया,
मिलकर कोई मीत आज छूटा नहीं,
जुड़कर कोई स्वप्न आज टूटा नहीं,
आज न कोई दर्द न कोई प्यास है।
फिर भी जाने क्यों मन आज उदास है?

आज घुमड़कर बादल छाया है कहीं,
बिना बुलाये सावन आया है कहीं,
किसी अधजले विकल शलभ की याद में,
आज किसी ने दीप जलाया है कहीं,
इसीलिए शायद मन आज उदास है।
जब कि न कोई दूर न कोई पास है॥

११

आ गई थी याद तब किस शाप की ?

कोयली को दे मधुर संगीत-स्वर,
सृष्टि की सीमन्त मे सिन्दूर भर,
धूल को कुंकुम बना, बिखरा सुरा,
चूम कलियो के अधर, गुंजार कर,
जब धरा पर देह धर ऋतुपति चला—मुस्कराये अश्रु औ' रोई हँसी !
आ गई थी याद तब किस शाप की ?

ले नयन मे कामना का तृप्ति-जल,
डाल मुख पर प्रीति का घूँघट नवल,
साज सपनो की सुहागिल चूनरी,
रँग महावर से मुखर पायल चपल,
जब पिया घर रूप की दुलहिन चली—मुस्कराई माँग, रोई कंचुकी !
आ गई थी याद तब किस शाप की ?

अश्रु से आराध्य के धो धो चरण,
फूल से निशि दिन चढा उजले सपन,
गूँथ गीतो का सजल गलहार-वर,
वर्तिका सी बार सब साधें तरुण,
भक्त जब वरदान के क्षण सो गया—मुस्कराई मूर्ति, रोई आरती !
आ गई थी याद तब किस शाप की ?

साध को कर चूर, सुधियो को सुला,
मोतियो की हाट, मरुथल मे गला,
ओढ अनचाही निठुरता का कफन,
स्नेह का काजल नयन जल मे घुला,
अश्रु-पथ जब प्रीति की अर्थी उठी—मुस्कराई नर्तकी, रोई सती !
आ गई थी याद तब किस शाप की ?

बाहु मे वरदान भर निर्माण के,
लोचनो मे सह शत दिनमान के,
ओठ मे मरु, वक्ष मे ज्वालामुखी,
कठ मे झोंके लिये तूफान के,
श्वास-यात्रा पर बढी उठ देह जब—मुस्कराई मृत्यु, रोई जिन्दगी !
आ गई थी याद तब किस शाप की ?

सूनी सूनी सांस की सितार पर···

१२

सूनी सूनी सांस की सितार पर,
गीले गीले आँसुओं के तार पर,
एक गीत सुन रही है जिन्दगी,
एक गीत गा रही है जिन्दगी।

चढ रहा है सूर्य उधर, चांद इधर ढल रहा,
झर रही है रात यहाँ, प्रात वहाँ खिल रहा,
जी रही है एक सांस, एक सांस मर रही,
बुझ रहा है एक दीप, एक दीप जल रहा,
इसलिये मिलन - विरह - विहान में—
इक दिया जला रही है जिन्दगी,
इक दिया बुझा रही है जिन्दगी।

रोज फूल कर रहा है धूल के लिये सिंगार,
और डालती है रोज धूल फूल पर अंगार,
कूल के लिये लहर लहर विकल मचल रही,
किन्तु कर रहा है कूल बूँद बूँद पर प्रहार,
इसलिये घृणा - विदग्ध - प्रीति को—
एक क्षण हँसा रही है जिन्दगी,
एक क्षण रुला रही है जिन्दगी।

एक दीप के लिये पतंग कोटि मिट रहे,
एक मीत के लिये असख्य मीत छुट रहे,
एक बूँद के लिये गले टले हजार मेघ,
एक अश्रु से सजीव सौ सपन लिपट रहे,
इसलिये सृजन - विनाश - सन्धि पर—
एक घर बसा रही है जिन्दगी,
एक घर मिटा रही है जिन्दगी।

सो रहा है आसमान, रात रो रही खडी,
जल रही बहार, कली नींद में जडी पडी,
घर रही है उम्र की उमग कामना शरीर,
टूट पर बिखर रही है साँस की लडी लडी,
इसलिये चिता की धूप छाँह मे—
एक पल सुला रही है जिन्दगी,
एक पल जगा रही है जिन्दगी।

जा रही बहार, आ रही खिज़ाँ लिये हुए,
जल रही सुबह बुझी हुई शमा लिये,
रो रहा है अश्क, आ रही है आँख को हँसी,
राह चल रही है गर्द-कारवाँ लिये हुए,
इस लिये मजार की पुकार पर—
एक बार आ रही है जिन्दगी,
एक बार जा रही है जिन्दगी।

१३

व्यग यह निष्ठुर समय का।

आँसुओ के स्नेह से जिसको जलाकर,
प्राण-अँचल-छाँह मे जिसको छिपाकर,
चीखती निशि की गहन बीहड डगर को—
पार कर पाता पथिक जिसकी दया पर,
पर बुझा देता वही दीपक बटोही,
जब समय आता निकट दिन के उदय का।
व्यग यह निष्ठुर समय का।

राह में जिसकी बिछा कुसुमित पलव-दल,
भाल-तल पर आंक जिसके चरण चचल,
सुरभि की सुरभित सुरासरि से जिसे छू,
हर लिया था ताप जिसकी देह का कल,
आज फूलो की उसी मृदु चाँदनी को,
नोचता बन काल वह झोका मलय का।
व्यग यह निष्ठुर समय का।

देखकर जिसका अबाधित वेग हर हर,
राह दे देते सहम कर शैल-भूधर,
तृण सदृश बहते सघन वन साथ जिसके,
घाटियाँ जिसमे पिघल जाती मचलकर,
बूँद सा लेकिन वही गतिवान निर्झर—
खोजता आश्रय उदधि मे अन्त लय का।
व्यंग यह निष्ठुर समय का।

कह रहे किस भाँति फिर तुम सत्य जीवन,
लक्ष्य उसका एक जब बस नाश का क्षण,
सत्य तो वह है समय हो दास जिसका,
नाश जिसके सामने कर दे समर्पण,
काल पर अंकित न जीवन-चिन्ह कोई,
किन्तु जीवन पर अमिट है लेख वय का।
व्यंग यह निष्ठुर समय का।

कुछ नही जीवन, अरे बस देह का ऋण,
जो चुकाना ही हमें पडता किसी क्षण,
कर रहा व्यापार पर इस व्याज से जो,
वह समय ही, काल ही शाश्वत-चिरन्तन,
फूल का है मूल्य उपवन मे न कोई,
सत्य मधुऋतु ही सदा सिरजन-प्रलय का।
व्यंग यह निष्ठुर समय का।

१४

बन्द कूलो में समुन्दर का शरीर,
किन्तु सागर कूल का बन्धन नही है।

धूल ने सीमित असीमित को किया है,
धूल ने अमरत्व मरघट को दिया है,
और सबको तो मिला जग में हलाहल,
बस अकेली धूल ने अमरित पिया है,
धूल सौ सौ वार मिटकर भी न मिटती,
क्योकि उसके प्राण मे धडकन नही है।
बन्द कूलो मे समुन्दर का शरीर,
किन्तु सागर कूल का बन्धन नही है।

एक रवि है सौ प्रभातो का उजेरा,
एक शशि है सौ निशाओ का सवेरा,
एक पल निज मे छिपाये कल्प लाखो,
एक तृण है कोटि विहगो का बसेरा,
और रजकण एक बाँधे मेरु उर मे,
मेरु का बन्दी मगर रजकण नही है।
बन्द कूलो में समुन्दर का
किन्तु सागर कूल का बन्धन न

धूल की ऐसी सुहागिल है चुनरिया,
ओढ जिसको हो गई विधवा उमरिया,
और जिसको भूल से छू एक क्षण में,
बन गई अगार आँसू की बदरिया,
धूल मंजिल, धूल पन्थी, धूल पथ है,
क्योंकि उसका नाश और सृजन नहीं है।

बन्द कूलों में समुन्दर का शरीर,
किन्तु सागर कूल का बन्धन नहीं है।

१५

अब तुम्हारा प्यार भी मुझको नहीं स्वीकार प्रेयसि !

चाहता था जब हृदय बनना तुम्हारा ही पुजारी,
छीनकर सर्वस्व मेरा तब कहा तुमने भिखारी,
आँसुओं से रात दिन मैंने चरण धोये तुम्हारे,
पर न भीगी एक क्षण भी चिर निठुर चितवन तुम्हारी,
जब तरस कर आज पूजा-भावना ही मर चुकी है,
तुम चली मुझको दिखाने भावमय संसार प्रेयसि !
अब तुम्हारा प्यार भी मुझको नहीं स्वीकार प्रेयसि !

भावना ही जब नहीं तो व्यर्थ पूजन और अर्चन,
व्यर्थ है फिर देवता भी, व्यर्थ फिर मन का समर्पण,
सत्य तो यह है कि जग में पूज्य केवल भावना ही,
देवता तो भावना की तृप्ति का बस एक साधन,
तृप्ति का वरदान दोनों के परे जो—वह समय है,
जब समय ही वह न तो फिर व्यर्थ सब आधार प्रेयसि !
अब तुम्हारा प्यार भी मुझको नहीं स्वीकार प्रेयसि !

अब मचलते हैं न नयनो में कभी रंगीन सपने,
हैं गये भर से किये थे जो हृदय मे घाव तुमने,
कल्पना मे अब परी बनकर उतर पाती नही तुम,
पास जो थे हैं स्वय तुमने मिटाये चिन्ह अपने,
दग्ध मन में जब तुम्हारी याद ही बाकी न कोई,
फिर कहाँ से मैं करूँ आरम्भ यह व्यापार प्रेयसि ।
अब तुम्हारा प्यार भी मुझको नही स्वीकार प्रेयसि ।

अश्रु-सी है आज तिरती याद उस दिन की नजर मे
थी पडी जब नाव अपनी काल तूफानी भवर में,
कूल पर तब हो खडी तुम व्यग मुझ पर कर रही थी,
पा सका था पार मैं खुद डूबकर सागर-लहर मे
हर लहर ही आज जब लगने लगी है पार मुझको
तुम चली देने मुझे तब एक जड पतवार प्रेयसि ।
अब तुम्हारा प्यार भी मुझको नही स्वीकार प्रेयसि ।

१६

अब मुझको प्रिय ! प्यार सिखाना व्यर्थ है।

जब बहार के दिन अपने थे बोली तब न कुयलिया,
जब वृन्दावन तड़प रहा था आया तब न सँवलिया,
बिलख बिलख मर गयी मगर जब विकल विरह की राधा,
नयन-यमुन-तट प्राण ! मिलन का रास रचाना व्यर्थ है।
अब मुझको प्रिय ! प्यार सिखाना व्यर्थ है।

एक बूँद के लिये पपीहे ने सौ सिन्धु बहाये,
किन्तु बादलों ने जी भर कर बस पाहन बरसाये,
तरस तरस बन गयी मगर जब तृप्ति तृषा ही तो फिर,
पथराये अधरों पर अमृत भी बरसाना व्यर्थ है।
अब मुझको प्रिय ! प्यार सिखाना व्यर्थ है।

अब सब सपने धूर भर चुकी हैं सारी आशायें,
टूटे सब विश्वास और बदली सब परिभाषायें,
जीता हूँ इसलिये कि जीना भी है एक विवशता,
है मृत्यु के लिये भी जीवन की कुछ आवश्यकता,
इसीलिये प्रिय प्राण ! किसी की सुधि का दीप सलोना,
मेरे अँधियारे खंडहर में आज जलाना व्यर्थ है।
अब मुझको प्रिय ! प्यार सिखाना व्यर्थ है।

खेल यह जीवन-मरण का • •

१७

आज तो अब बन्द कर दो खेल यह जीवन-मरण का।

थक चुका तन, थक चुका मन, थक चुकी अभिलाष मन की,
साँस भी चलती थकी सी, झूमती पुतली नयन की,
स्वेद, रज से लस्त जीवन बन गया है भार पग पर,
वह गरजती रात आती पोंछती लाली गगन की,
झर रहा सीमन्त-मुक्ता-फल दिन-यामिनि-किरण का।
आज तो अब बन्द कर दो खेल यह जीवन-मरण का॥

स्वप्न-नीडों की दिशा में ले मधुर अरमान मन में,
जा रहे उड़ते विहग संकेत सा करते गगन में,
तैरती दिन भर रही जो नाव तट पर आ लगी है,
और भी जग के खिलाड़ी जा रहे मधु की शरण में,
यह अकेलों का सहारा चाँद भी खोया गगन का।
आज तो अब बन्द कर दो खेल यह जीवन-मरण का॥

प्रात से ही खेलता हूँ खेल में अब तक तुम्हारा,
और क्षण भर भी नही विश्राम को मैंने पुकारा,
किन्तु आखिर मैं मनुज हूँ और मुझमे मन मनुज का,
बाद श्रम के चाहता जो सेज-शय्या का सहारा,
खेलता कैसे रहूँ फिर खेल में निशि भर नयन का।
आज तो अब बन्द कर दो खेल यह जीवन-मरण का ॥

खेल यह होगा खतम कल या नही—यह भी अनिश्चित,
कौन जीतेगा सदा से सर्वथा यह बात अविदित,
फिर कहो किस आस पर मैं लडखडाता सा निरन्तर,
खेलता ही नित रहूँ इस खेल से होकर अपरिचित,
जब कि सम्मुख हो रहा है खून मेरे सुख-सपन का।
आज तो अब बन्द कर दो खेल यह जीवन-मरण का ॥

"ओ सरल नादान मानव ! जान क्या पाया न अब तक,
हो नही सकता ख़तम यह खेल बाकी सांस जब तक,
वह नया कच्चा खिलाडी खेल के जो बीच ही मे,
पूँछता है साथियों मे बन्द होगा खेल कब तक,
इसलिए फिर से जुदा जो खो गया उत्साह मन का।
और हँसकर खेलता जा खेल यह जीवन-मरण का ॥"

१८

रुके न जब तक साँस, न पथ पर रुकना थके बटोही !

साँसों से पहले ही जो पन्थी पथ रुक जाता,
जग की नजरों में कायर वह जीकर भी मर जाता,
चलते चलते ही जो मिट जाता है किन्तु डगर पर,
उसके पथ की खाक विश्व मस्तक पर सदा चढ़ाता,
पथ पर साँसों की गति से है मूल्य अधिक पग-गति का,
पग के छालों से पथ पर यह लिखना थके बटोही !
रुके न जब तक साँस, न पथ पर रुकना थके बटोही ॥

अगणित कठिन पहाड़ नदी की राह रोकने आते,
पर उसकी गति के सम्मुख सब चूर चूर हो जाते,
चलना ही, बढ़ना ही जिसके जीवन का व्रत प्रण है,
जग भर के तूफान प्रलय-घन उसको रोक न पाते,
साँसों की गति से, पग-गति से अधिक प्रबल गति मन की,
पग-गति में मन की गति भर कर चलना थके बटोही !
रुके न जब तक साँस, न पथ पर रुकना थके बटोही ॥

जीवन क्या—माटी के तन मे केवल गति भर देना,
और मृत्यु क्या—उस गति को ही क्षण भर यति कर देना,
गति-यति के जो बीच किन्तु है एक वस्तु अनजानी,
वही मनुज की हार-जीत के क्रम की अमिट निशानी,
यही निशानी पथ पर जिससे जीत बनी मुस्काये,
मुस्काकर स्वागत शूलों का करना थके बटोही !
रुके न जब तक साँस, न पथ पर रुकना थके बटोही ॥

१६

पथ पर चलना तुझे तो मुस्कराकर चल मुसाफ़िर !

वह मुसाफिर क्या जिसे कुछ शूल ही पथ के थका दें ?
हौंसला वह क्या जिसे कुछ मुश्किलें पीछे हटा दें ?
वह प्रगति भी क्या जिसे कुछ रंगिनी कलियाँ तितलियाँ,
मुस्कराकर गुनगुनाकर ध्येय-पथ, मंजिल भुला दें ?
जिन्दगी की राह पर केवल वही पथी सफल है,
आँधियों में, बिजलियों में जो रहे अविचल मुसाफिर !
पथ पर चलना तुझे तो मुस्कराकर चल मुसाफिर ॥

जानना जब तू कि कुछ भी हो तुझे बढ़ना पड़ेगा,
आँधियों से ही न खुद से भी तुझे लड़ना पड़ेगा,
सामने जब तक पड़ा कर्तव्य-पथ तब तक मनुज ओ !
मौत भी आये अगर तो मौत से भिड़ना पड़ेगा,
है अधिक अच्छा यही फिर पथ पर चल मुस्कराता,
मुस्करानी जाय जिससे जिन्दगी असफल मुसाफिर !
पथ पर चलना तुझे तो मुस्कराकर चल मुसाफ़िर ॥

याद रख जो आँधियों के सामने भी मुस्कराते,
वे समय के पथ पर पदचिह्न अपने छोड़ जाते,
चिह्न वे—जिनको न धो सकते प्रलय-तूफान घन भी,
मूक रह कर जो सदा भूले हुओं को पथ बताते,
किन्तु जो कुछ मुश्किलें ही देख पीछे लौट पड़ते,
जिन्दगी उनकी उन्हें भी भार ही केवल मुसाफिर !
पथ पर चलना तुझे तो मुस्कराकर चल मुसाफिर ॥

कण्टकित यह पथ भी हो जायगा आसान क्षण मे,
पाँव की पीड़ा क्षणिक यदि तू करे अनुभव न मन मे,
सृष्टि सुख-दुख क्या हृदय की भावना के रूप हैं दो,
भावना की ही प्रतिध्वनि गूँजती भू, दिशि, गगन में,
एक ऊपर भावना से भी मगर है शक्ति कोई,
भावना भी सामने जिसके विवश व्याकुल मुसाफिर !
पथ पर चलना तुझे तो मुस्कराकर चल मुसाफिर ॥

देख सर पर ही गरजते हैं प्रलय के काल-बादल,
व्याल बन फुफकारता है सृष्टि का हरिताभ अंचल,
कंटकों ने छेदकर है कर दिया जर्जर सकल तन,
किन्तु फिर भी डाल पर मुस्का रहा वह फूल प्रतिपल,
एक तू है देखकर कुछ शूल ही पथ पर अभी से,
है लुटा बैठा हृदय का धैर्य, साहस, बल मुसाफिर !
पथ पर चलना तुझे तो मुस्कराकर चल मुसाफिर ॥

२०

काल बादल से घुन जाय वह मेरा इतिहास नहीं है।

गायक जग में कौन गीत जो मुझ सा गाये
मैंने तो केवल हैं ऐसे गीत बनाये,
कंठ नहीं, गाती है जिनको पलक गीली,
स्वर-सम जिनके अश्रु-मोतिया, हास नहीं है।
काल बादल से

मुझसे ज्यादा मस्त जगत में मस्ती किसकी
और अधिक आज़ाद अछूती हस्ती किसकी,
मेरी बुलबुल चहका करती उन बगियों में,
जहाँ सदा पतझर, आता मधुमास नहीं है।
काल बादल से

विराम इतनी शक्ति साथ जो कदम धर सके,
गति न पवन की भी जो मुझसे होड़ कर सके,
मैं ऐसे पथ का पंथी हूँ जिसको क्षण भर,
मंजिल पर भी रुकने का अवकाश नहीं है।
काल बादल से

कौन विश्व में है जिसका मुझसे सिर ऊँचा ?
अभ्रकप यह तुंग हिमालय भी तो नीचा,
क्योंकि खुले हैं मेरे लोचन उस दुनियां में,
जहां धरा तो है लेकिन आकाश नहीं है।

काल बादलों से

२१

मैं तूफानों मे चलने का आदी हूँ
तुम मत मेरी मंजिल आसान करो ।

हैं फूल रोकते, काँटे मुझे चलाते,
मरुथल, पहाड चलने की चाह बढाते,
सच कहता हूँ मुश्किलें न जब होती हैं,
मेरे पग तब चलने मे भी शरमाते,
मेरे सँग चलने लगें हवायें जिससे,
तुम पथ के कण कण को तूफ़ान करो।

मैं तूफ़ानों मे चलने का आदी हूँ
तुम मत मेरी मंजिल आसान करो !

अंगार अधर पर धर मैं मुस्काया हूँ,
मैं मरघट से ज़िन्दगी बुला लाया हूँ,
हूँ आँख-मिचौनी खेल चुका क़िस्मत से,
सौ बार मृत्यु के गाल चूम आया हूँ,
है नही मुझे स्वीकार दया अपनी भी,
तुम मत मुझ पर कोई अहसान करो।

मैं तूफानों में चलने का आदी हूँ
तुम मत मेरी मंजिल आसान करो।

श्रम के जल से ही राह सदा सिंचती है,
गति की मशाल आँधी म ही हँसती है,
शूलो से ही शृङ्गार पथिक का होता,
मंजिल की मांग लहू से ही सजती है,
पग मे गति आती है छाले छिलने से,
तुम पग पग पर जलती चट्टान धरो।
मैं तूफानो मे चलने का आदी हूँ
तुम मत मेरी मंजिल आसान करो!

फूलो से मग आसान नही होता है,
रुकने से पग गतिवान नही होता है,
अवरोध नही तो संभव नही प्रगति भी,
है नाश जहाँ निर्माण वही होता है,
मै बसा सकूँ नव स्वर्ग धरा पर जिससे,
तुम मेरी हर बस्ती वीरान करो।
मैं तूफानो में चलने का आदी हूँ
तुम मत मेरी मंजिल आसान करो!

मैं पन्थी तूफानो मे राह बनाता,
मेरा दुनियाँ से केवल इतना नाता—
वह मुझे रोकती है अगार बिछाकर,
मैं ठोकर उसे लगाकर बढता जाता,
मैं ठुकरा सकूँ तुम्हे भी हँसकर जिससे,
तुम मेरा मन-मानस पाषाण करो।
मैं तूफानो में चलने का आदी हूँ
तुम मत मेरी मंजिल आसान करो!

२२

मैं अकपित दीप प्राणों का लिये,
यह तिमिर तूफान मेरा क्या करेगा ?

बन्द मेरी पुतलियों मे रात है,
हास बन बिखरा अधर पर प्रात है,
मैं पपीहा, मेघ क्या मेरे लिये,
जिन्दगी का नाम ही बरसात है,
सांस मे मेरी उनन्चासों पवन,
यह प्रलय पवमान मेरा क्या करेगा ?
यह तिमिर तूफान मेरा क्या करेगा ?

कुछ नहीं डर वायु जो प्रतिकूल है,
और पैरो मे मसकना भूल है,
क्योंकि मेरा तो सदा अनुभव यही,
राह पर हर एक कांटा फूल है,
बढ रहा जब मैं लिये विश्वास यह,
पन्थ यह वीरान मेरा क्या करेगा ?
यह तिमिर तूफान मेरा क्या करेगा ?

मुश्किलें मारग दिखाती हैं मुझे,
आफतें बढना बताती है मुझे,
पन्थ की उत्तुङ्ग दुर्दम घाटियाँ
ध्येय-गिरि चढना सिखाती हैं मुझे,
एक भू पर, एक नभ पर पग मेरा,
यह पतन-उत्थान मेरा क्या करेगा ?
— तिमिर तूफान मेरा क्या करेगा ?

यह संभव नहीं है···

२३

पन्थ की कठिनाइयों से मान लूं मैं हार—यह सभव नही है

मैं चला जब रोकने दीवार सी दुनियाँ खडी थी
मैं हँसा तब भी बनी जब आँख सावन की झडी थी,
उस समय भी मुस्कराकर गीत मैं गाता रहा था,
जब कि मेरे सामने ही लाश खुद मेरी पडी थी,
आज है यदि देह लथपथ, रक्तमय पग, कटंकित मग,
फेंक दूं निज शीश का मैं भार—यह सभव नही है !
पथ की कठिनाइयों से मान लूं मैं हार—यह सभव नही है !

चल रहा हूँ मैं इसी से चल रहीं निर्जीव [illegible]
जल रहा हूँ मैं इसी से हो गईं [illegible]
रात मेरी आँख का काजल [illegible]
छीनकर उच्छ्वास मेरे बन गईं [illegible]
आज मेरी चेतना ही से कि [illegible]
मैं बनूं जड धूल का आधार—[illegible]
पन्थ की कठिनाइयों से मान लूं मैं हार—[illegible]

पूँछती है एक मुझसे प्रश्न फिर फिर सृष्टि सारी—
'क्या तुम्हारी भाँति ही व्याकुल पथिक ! मंजिल तुम्हारी ?'
कौन उत्तर दूँ भला मैं सिर्फ इतना जानता हूँ,
राह पर चलती हमारे साथ ही मंजिल हमारी,
आज तम में वह अगर ओझल हुई है लोचनों से,
मै करूँ उसकी न सुधि साकार—यह संभव नही है !
पन्थ की कठिनाइयों से मान लूँ मैं हार—यह संभव नही है !

मैं मुसाफिर हूँ कि जिसने है कभी रुकना न जाना,
है कभी सीखा न जिसने मुश्किलों मे सर झुकाना,
क्या मुझे मंजिल मिलेगी या नही—इसकी न चिन्ता,
क्योंकि मंजिल है डगर पर सिर्फ चलने का बहाना,
और तो सब धूर, पथ पर चाह चलने की अमर बस,
मैं अमर पद का न लूँ अधिकार—यह संभव नही है !
पन्थ की कठिनाइयों से मान लूँ मैं हार—यह संभव नही है !

कर्म रत-जग, हर दिशा से कर्म की आवाज आती,
काल की गति एक क्षण को भी नही विश्राम पाती,
मैं रुकूँ भी तो मगर यह रास्ता रुकने न देगा,
राह पर चलते न हम ही, राह भी हमको चलाती,
आज चलने के लिये जब धूल तक ललकारती है—
पन्थ की कठिनाइयों से मान लूँ मैं हार—यह संभव नही है !

२४

बदल गये अब नयन तुम्हारे ।

साथ साथ हम चले डगर पर,
मैं रो रोकर, तुम हँस हँस कर,
लिये गोद में किन्तु न तुमने मेरे अश्रु निहारे ।
बदल गये अब नयन तुम्हारे ॥

जिनमें स्नेह-सिन्धु लहराता,
प्रीति भरा बादल मुस्काता,
देखे उनमें आज घृणा के धधक रहे अंगारे ।
बदल गये अब नयन तुम्हारे ॥

सोच रहा मैं दुखी मन,
कितना कठिन प्रेम का बन्धन,
वहीं गये हर बार जहाँ हम जीती बाजी हारे ।
बदल गये अब नयन तुम्हारे ॥

२५

अरे ! ऐसे भी क्षण आते।

प्राण-व्यथा जिसको रो रो कर,
हम चाहते सुनाना क्षण भर,
आकर पर उसके सम्मुख ही
रोते रोते हम सहसा मुस्काने लग जाते।
अरे ! ऐसे भी क्षण आते॥

पागल हो तलाश मे जिसकी,
हम खुद वन जाते रज मग की,
किन्तु प्राप्ति की व्याकुलता में
कभी कभी हम मंज़िल से भी आगे वढ जाते।
अरे ! ऐसे भी क्षण आते॥

जिसकी पूजा जीवन की गति,
पथ-पाथेय मधुर जिसकी स्मृति,
मचल उसी आराध्य से कभी
हम अपनी ही पूजा करवाने को अकुलाते।
अरे ! ऐसे भी क्षण आते॥

२६

निष्ठुर इतना तो बतलाते !

कौन भूल ऐसी की हमने,
जो यह दंड दिया है तुमने,
थमते अश्रु न और भूलकर होंठ कभी मुस्काते।
निष्ठुर इतना तो बतलाते !

तोड़ प्रेम के बन्धन सारे,
जाना था यूँही यदि प्यारे !
ले जाते निज याद, हृदय मेरा मुझको दे जाते।
निष्ठुर इतना तो बतलाते !

तो अकुलाते प्राण न इतने,
तो न विलखते टूटे सपने,
हम भी आकर द्वार तुम्हारे तुम पर धूल उड़ाते।
निष्ठुर इतना तो बतलाते !

हैं जग में सुन्दर से सुन्दर,
बहुत देवता, जो पूजा पर,
कर देते खुद को न्योछावर,
किन्तु हमारी कमजोरी यह—
उनको ही पूजते सदा हम जो पूजा ठुकराते !
निष्ठुर इतना तो बतलाते !

२७

हुई थी तेरी भारी हार ।

मन बोला अब भक्ति न होगी,
पूजा में अनुरक्ति न होगी,
देने को वरदान देवता हुआ कि जब तैयार ।
हुई थी तेरी भारी हार ॥

पग बोला क्षण भर भी मैं अब,
चल न सकूंगा इस पथ पर, जब
मंजिल थी रह गयी दूर बस केवल पग दो चार ।
हुई थी तेरी भारी हार ॥

कंठ रुका सहमा यह कहकर
रह अनसुना ही मेरा स्वर,
गुंजरित होने वाला था जब गीतों से संसार ।
हुई थी तेरी भारी हार ॥

२८

अब नहीं मुझको दया स्वीकार !

है गरजता आंसुओं का सिन्धु खारा,
डूबता हूँ मैं, न पर तुम दो सहारा,
क्योंकि अब तो पार उतरूँगा तभी मैं
पार मुझको जब लगायेगी यही मँझधार !
अब नहीं मुझको दया स्वीकार !!

नीड टूटा, मैं निराश्रित, पख हा
पर न खोलो तुम हृदय-गृह-द्वार प्यारे
मैं बसेरा अब तभी लूंगा कभी जब,
नीड मेरा खुद करेंगी बिजलियाँ तैयार !
अब नही मुझको दया स्वीकार !!

प्यास मन में तीव्र, चारो ओर मरुथल,
मैं विकल हूँ, पर न दो तुम तृप्ति का जल,
प्यास मैं अब तब बुझाऊँगा अधर पर–
आँख से मेरी गिरेगी जब लहू की धार !
अब नही मुझको दया स्वीकार !!

२६

यदि मन अजित-अजेय, पराजय भी फिर जय है।

भूलुठित भुजचक्र, किरीट, कवच, कल कुडल,
टूक टूक तूणीर, खड कोदण्ड, दण्ड-बल,
श्रीहत शयित धरायित सैन्य सनी शोणित मे,
क्षत-विक्षत शिर-वक्ष, न कोई साथी-सम्बल,
पर जब तक लालसा समर की शेष रक्त मे,
हार हार यह नही, विजय ही अजर अजय है।
यदि मन अजित-अजेय, पराजय भी फिर जय है।

अर्घ्य नही, आरती नही, हो नही अर्चना,
कर्म नही, साधना नही, हो नही वन्दना,
ध्यान नही, धारणा नही, हो नही देवता,
फूल न चन्दन, भोग न पूजा, नही प्रार्थना,
पूजा की भावना पुजारी में पर जब तक,
झुके जहाँ भी शीश वही तो देवालय है।
यदि मन अजित-अजेय, पराजय भी फिर जय है।

सुप्त सितारे, चाँद, गगन, भू, सुप्त दिशायें,
सुप्त विजन वन, सुप्त पात, द्रुम, सुप्त हवायें,
सपनो के जादूघर मे सो गईं पुतलियां,
सुप्त प्रणय के गान, प्राण की सुप्त व्यथायें,
पर जब तक छल रहा चकोरी को शशि निष्ठुर
यह निद्रालस-रास जागरण का अभिनय है।
यदि मन अजित-अजेय, पराजय भी फिर जय है।

घू घू जलती धरा उगलती आग-अंगारे,
ताप-ग्रस्त नभ, खौल रहे सरि-सागर सारे,
पीत पात, रूखे सूखे तरु, नंगी डालें,
फूल, कली, मधु, गंध न, मधुकर दूर सिधारे,
बुलबुल के दिल मे पर जब तक याद चमन की
यह पतझर तूफान मदिर मधुमास सपन है।
यदि मन अजित-अजेय, पराजय भी फिर जय है।

यह कैसा आश्चर्य कि युग-व्यापी जीवन का
थामे कर मे सूत्र इशारा केवल मन का ?
इतनी बडी धरा पर सचालित ऋतु से बस ?
एक क्षुद्र सा फूल रूप सारे उपवन का ?
एक बूंद ही तो समुद्र की गहराई है,
एक सत्य ही तो सौ सपनो का आश्रय है।
यदि मन अजित-अजेय, पराजय भी फिर जय है ॥

चांदी का यह देश…

३०

चांदी का यह देश, यहाँ के छलिया [illegible],
सोच समझकर करना पन्थी यहाँ किसी से [illegible],
[illegible]।

यहाँ किसे अवकाश [illegible] [illegible] [illegible] बाहें,
तुझ पर करे बहार यहाँ [illegible] [illegible] बाहें,
पावन वन [illegible] [illegible] [illegible] में,
कौन यहाँ [illegible] [illegible] [illegible] निगाहें,
फूलों की [illegible] [illegible] का मेला,
कौन [illegible] [illegible] [illegible] की पार।
सोच [illegible] [illegible] यहाँ किसी से प्यार॥

यहाँ प्रीति की माँग घृणा से ही पूरी जाती है,
हाय हृदय देकर भी दुनियाँ अंगारे पाती है,
सर्वस लेकर भी, न शलभ को शमा कफन तक देती,
रोज़ कली के लिये भ्रमर की अर्थी अकुलाती है,
यहाँ सूर्य के शव पर दीपावली मनाती संध्या,
और साँझ की बुझी चिता पर करता चाँद विहार।
सोच समझकर करना पन्थी यहाँ किसी से प्यार ॥

देख ! हलाहल बाँट रही है मधु कह कर मधुबाला,
और आग के फूल छिपाये लहरों की हर माला,
बुलबुल का दिल चीर देख वह छली गुलाब खड़ा है,
लिये निशा की लाश आ रहा है हँसता उजियाला,
पीने ही को प्यास धरा की घिरती यहाँ बदरिया,
लाने को पतझार चमन मे करती नृत्य बहार।
सोच समझकर करना पन्थी यहाँ किसी से प्यार ॥

डाले हुए रूप का घूँघट खड़ी यहाँ निष्ठुरता,
पिये प्रणय का रक्त थिरकती इठलाती सुन्दरता,
अरे कली की भोली चोली में विषधर बैठा है,
और प्यार की सरल गोद में छिप छल अभिनय करता,
एक किरण दे यहाँ हज़ारों दीप बुझाती ऊषा,
एक बूँद बरसा करता घन सौ सौ वज्र-प्रहार।
सोच समझकर करना पन्थी यहाँ किसी से प्यार ॥

कभी किसी ने यहाँ प्राण की पीर नहीं पहचानी,
आँसू की आवाज़ यहाँ तो सदा रही अनजानी,
कभी किसी का यहाँ न कोई सपना पूरा होता,
और अधूरी सदा रही है सबकी प्रेम-कहानी,
यहाँ प्रेम की मृत्यु, मृत्यु से पहले हो जाती है,
उससे भी पहले होती है किन्तु चिता तैयार।
सोच समझकर करना पन्थी यहाँ किसी से प्यार॥

२१

जिन मुश्किलों में मुस्कराना हो मना,
उन मुश्किलों में मुस्कराना धर्म है।

जिस वक्त जीना गैर-मुमकिन सा लगे,
उस वक्त जीना फर्ज है इन्सान का,
लाजिम लहर के साथ है तब खेलना,
जब हो समुन्दर पर नशा तूफान का,
जिस वायु का दीपक बुझाना ध्येय हो,
उस वायु में दीपक जलाना धर्म है।
जिन मुश्किलों में मुस्कराना हो मना
उन मुश्किलों में मुस्कराना धर्म है।।

हो ही नही मज़िल कही जिस राह की
उस राह चलना चाहिये ससार को,
जिस दर्द से सारी उमर रोते कटे,
वह दर्द पाना है ज़रूरी प्यार को,
जिस चाह का हस्ती मिटाना नाम है,
उस चाह पर हस्ती मिटाना धर्म है।
जिन मुश्किलो मे मुस्कराना हो मना
उन मुश्किलो मे मुस्कराना धर्म है।।

आदत पडी हो भूल जाने की जिसे,
हर दम उसी का नाम हो हर सांस पर,
उसकी खबर मे ही सफर सारा कटे,
जो हर नज़र से हर तरह हो बेखबर,
जिस आँख का आँखें चुराना काम हो,
उस आँख से आँखें मिलाना धर्म है।
जिन मुश्किलो मे मुस्कराना हो मना,
उन मुश्किलो मे मुस्कराना धर्म है।।

जब हाथ से टूटे न अपनी हथकडी,
तब मांग लो ताकत स्वय जज़ीर से,
जिस दम न थमती हो नयन-सावन-झडी,
उस दम हँसी ले लो किसी तस्वीर से,
जब गीत-गाना-गुनगुनाना जुर्म हो,
तब गीत-गाना-गुनगुनाना धर्म है।
जिन मुश्किलो मे मुस्कराना हो मना,
उन मुश्किलो मे मुस्कराना धर्म है।।

अधिकार जब अधिकार पर शासन करे,
तब छीनना अधिकार ही कर्त्तव्य है,
संहार ही हो जब सृजन के नाम पर
तब सृजन का संहार ही भवितव्य है,
बस गरज यह गिरते हुए इन्सान को,
हर तरह, हर विधि से उठाना धर्म है।
जिन मुश्किलों में मुस्कराना हो मना,
उन मुश्किलों में मुस्कराना धर्म है!!

३२

फूल हो जो शूल से शृङ्गार करता है,
जिन्दगी के साथ मैं सिलवार करता हूँ।

क्योंकि है यह जिन्दगी रंगीन [illegible],
भोर का उजियार है जग का सुनहरा [illegible],
स्वप्न-वन तन है कि जिसमें प्राण का [illegible]
श्वास-तिनकों से रहा बुन [illegible],
इसलिये हँस मृत्यु भी स्वीकार [illegible] हूँ
और विष को भी अमृत की धार [illegible] हूँ।

जानता हूँ यह घर दो दिन [illegible],
आज ही तक सिर्फ़ है यह [illegible]
रात भर के ही लिये है [illegible]
चाँदनी बस हो [illegible]
इसलिये [illegible] हूँ
फूल का भी [illegible] हूँ

प्राण! है अपना यहाँ बस कुछ क्षणों का साथ,
कल अलग होना हमें होगा बिना कुछ बात,
रात की जब तक सजी है सेज शर्मीली,
है बँधा भुजपाश में तब तक तुम्हारा गात,
इसलिये हर रात को अभिसार करता हूँ,
और दिन मे याद को साकार करता हूँ।

तुम मुझे इसके लिये चाहे करो बदनाम,
क्यो न कितने ही बुरे मेरे धरो तुम नाम,
दड भी चाहे कठिन तुम दो मुझे इतना
डूब जाये आँसुओ मे हर सुबह, हर शाम,
पर यही अपराध मैं हर बार करता हूँ—
'आदमी हूँ, आदमी से प्यार करता हूँ।'

३३

आज पिला दो जी भर कर मधु कल का करो न ध्यान सुनयने !
कल का करो न ध्यान।
सम्भव है कल तक मिट जाये मधु के प्रति आकर्षण मन का,
मधु पीने के लिये न हो कल सम्भव है यौवन [illegible]
पीने और पिलाने को हम ही न रहें कल [illegible]
पल पल पर झकझोर रहा है काल प्रबल [illegible]
कौन जानता है कब किस पल तार तार [illegible]
जीवन क्या—साँसों के कच्चे धागों का [illegible]
कल का करो न ध्यान।

क्या मालूम घिरी न घिरी कल यह मनभावन घटा गगन मे,
क्या मालूम चली न चली कल यह मृदु मन्द पवन मधुबन मे,
स्वर्ग नर्क को भूल आज जो गीत गा रही लालपरी के,
क्या मालूम रही न रही कल मस्ती वह दीवानी मन मे,
अनमांगे वरदान सदृश जो छलक उठा मधु जीवन-घट मे,
क्या मालूम वही कल विष बन, बने स्वप्न-अवसान सुनयने।
कल का करो न ध्यान॥

मस्त कनखियो से साकी की जहाँ सुरा हरदम भरती थी,
पायल की रुनझुन धुन मे आवाज मौत की भी मरती थी,
मदिरा की रगीन चुनरिया ओढ महल मे मदिरालय के
कलियो की मुस्कानो से वासना सिंगार जहाँ करती थी,
आज किन्तु उस तृषा-तीर्थ के शेष चिन्ह केवल दो ही थे—
मरघट सा सूना भयावना, और भूंकते श्वान सुनयने।
कल का करो न ध्यान।

और इधर इस पथ पर तो कल घिरा मौत का था अँधियाला
टूक टूक हो पड़ा धूल मे सिसक रहा था माणिक प्याला
मधु तो दूर, गरल की भी दो बूंदें थी न नयन के सम्मुख
लेता था उच्छ्वास तिमिर मे पड़ा विमुध मन पीने वाला
आज अचानक ही पर जो तुम हो, मै हूँ, मधु है, बदली है
इसका अर्थ यही कि चाहता विधि भी हो मधुपान सुनयने
कल का करो न ध्यान

जीवन मे ऐसा शुभ अवसर कभी कभी ही तो आता है—
प्यासे के समीप ही जब खुद मदिरालय दौड़ा आता है,
वह अज्ञानी है अग जग के मिथ्या तर्कों में पड़कर जो
ो ऐसा वरदान अन्त तक कर मल मल कर पछताता है,
र्थ न मुझे बनाओ इसमे पाप, पुण्य की परिभाषायें,
न्तु डूब मधु मे सब बुध बनने दो एक समान [illegible]!
कल का करो न ध्यान ॥

पीकर भी यदि ध्यान रहा कल का तो व्यर्थ पिलाना मन को,
व्यर्थ सुराही की गहराई, व्यर्थ सुरा सुरभित चितवन की,
मदिरा नहीं, किन्तु मदिरा के प्याले में [illegible] केवल [illegible]
पीकर जिसे न भूल सके मन चिन्ता जीवन और मरण की,
मस्ती भी वह मस्ती क्या जो देख काल की भृकुटि-भंगिमा,
भूल जाय गाना जीवन की मदिर दशा का गान [illegible]!
कल का करो न ध्यान ॥

ह 'आज-कल' का यह प्रेयसि! युग युग से [illegible] [illegible]
किन्तु कभी क्या कोई जग में जीता कल की [illegible]?
जीवन के दो ही दिन जिनमें आज [illegible] और [illegible],
कल की आस लिये सारा जग और [illegible] ही [illegible] है,
प्रिय! इससे अरमानों की इस [illegible] [illegible] [illegible] की [illegible],
बन जाने भी दो सुहाग की [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]!
कल का करो न ध्यान ॥

३४

आज तो मुझसे न शरमाओ—तुम्हे मेरी कसम है।

आज बरसो बाद घायल पीर क्षण भर सो सकी है,
आज बरसो बाद गूँगी चाह मुखरित हो सकी है,
आज युग के बाद मेरी रात मे दो चाँद चमके,
आज युग के बाद मेरी प्यास ओठ भिगो सकी है,
आज चुम्बन की लगी बरसात अधरो की गली मे,
बीच मे दीवार सी फिर क्यो खडी सहमी शरम है?
आज तो मुझसे न शरमाओ—तुम्हे मेरी कसम है।

चांदनी तरु के तले अभिसार तम मे कर रही है,
ओस गालों पर कली के चुम्बनो सी भर रही है,
रात के उभरे उरोजो मे छिपाये चांद मुखडा,
वह लता तरु की जवानी बाहुओ मे भर रही है,
आंधियां अंगडा रही हैं आज कण-कण मे धरा के,
आज ठडी सृष्टि की चोली गरम, बोली नरम है।
आज तो मुझसे न शरमाओ—तुम्हें मेरी कसम है।

बाहुओं की घाटियो मे यह नदी जैसी जवानी,
आज बँधने को हुई लाचार लेकर आग पानी,
आज अधरो से अधर पर एक लिख दो गीत कोई,
और पढ लो आंख से सब अनकही मेरी कहानी,
मत हटाओ ओठ इस डर से कि जूठे हो न जायें
प्यार ने प्रेयसि ! कभी माना नहीं कोई नियम है।
आज तो मुझसे न शरमाओ—तुम्हें मेरी कसम है।

घुट घुटी रातें हजारों आज तव [illegible]
हो गये सौ सिन्धु मरु तव आँख अब [illegible]
वह गये लाखों महल तव नच हुआ [illegible]
कोटि चिर-घट चुर गये तव [illegible]
इसलिए कल पर न टालो आज की [illegible]
प्रिय ! मिलन के वास्ते यह [illegible]
आज तो [illegible]

मत कहो ससार कल हम पर करेगा क्या इशारे,
मत सुनो क्या कर रहे हैं धर्म के विध्वस सारे,
बस छिपा लो आज मेरी आग अपने वक्ष मे तुम,
डूब जाने दो सदा को आज के सब चाँद, तारे,
यदि मिला अवकाश तो कल धर्मग्रन्थो को पढूँगा
आज तो लेकिन समर्पण ही सुमुखि ! अपना धरम है।
आज तो मुझसे न शरमाओ तुम्हे मेरी कसम है॥

३५

अब बुलाऊँ भी तुम्हें तो तुम न आना।

टूट जाये शीघ्र जिससे आस मेरी
छूट जाये शीघ्र जिससे साँस मेरी,
इसलिये यदि तुम कभी आओ इधर तो
द्वार तक आकर हमारे लौट जाना।
अब बुलाऊँ भी तुम्हें ....।।

देख लूँ मैं भी कि तुम कितने निठुर हो,
किस कदर इन आँसुओं से बेखबर हो,
इसलिए जब सामने आकर तुम्हारे
मैं बहाऊँ अश्रु तो तुम मुस्कराना।
अब बुलाऊँ भी तुम्हें ...।।

जान लूँ मैं भी कि तुम कैसे शिकारी,
चोट कैसी तीर की होती तुम्हारी,
इसलिए घायल हृदय लेकर खड़ा हूँ
लो लगाओ साधकर अपना निशाना।
अब बुलाऊँ भी तुम्हें ...।।

एक भी अरमान रह जाये न मन मे,
औ' न मचले एक भी आंसू नयन मे,
इसलिये जब मै मरूँ तब तुम घृणा से
एक ठोकर लाश में मेरी लगाना।
अब बुलाऊँ भी तुम्हे !!

३६

आज मेरी गोद में शरमा रहा कोई,
चाँद से कह दो नहीं वह मुस्कराये।

जा बहारों से कहो बोले न बुलबुल
क्योंकि अनबोली कहानी चल रही है,
जा सितारों से बुझा दो दीप सारे
क्योंकि पानी बन जवानी जल रही है,

अब पिया को और मत टेरे पपीहा
क्योंकि सीने में धड़कता दिल किसी का,
करवटें बदले न लहरों की [illegible]
क्योंकि डूबा जा रहा साहिल किसी का,

आज सपना हो गया साकार [illegible]
रात से बोलो न वह [illegible]।
चाँद से कह दो नहीं वह मुस्कराये॥

आज प्यासी बाहुओ के कुंजबन में
सागरो की देह शरमाई पडी है,
डगमगाते गर्म ओठो की शरण मे
आग की आँधी बुलाई सी खडी है,

आज लगता है कि पलको की सतह पर
सो रहा है अनमना तूफान कोई,
जान पडता है कि सांसो से उलझकर,
रह गया है एक रेगिस्तान कोई,

आज जो मुझको छुयेगा वह जलेगा
इसलिये कोई न अब उँगली उठाये।
चाँद से कह दो नही वह मुस्कराये॥

आज पहली बार अपनी जिन्दगी मे,
कर रहा महसूस–मै भी जी रहा हूँ,
आज पहली बार होकर बेखबर मैं
हर कसम पर बे पिये ही पी रहा हूँ,

आज पहली बार ही मानो न मानो
सो सका हूँ खोल कर मै आँख अपनी,
आज पहली बार सांसो के सफर में
हो सकी है एक अपनी चीज अपनी,

आज मैं अनमोल हूँ बेमोल बिक कर
जग न अब मेरी कही कीमत लगाये।
चाँद से कह दो नही वह मुस्कराये॥

आज मत पूछो कि मैं क्या कर रहा हूँ,
और है क्या कह रहा ससार सारा,
आज मुझको भय नही है काल का भी,
आज मेरा प्राण है जलता अँगारा,

प्रश्न तो ससार के हरदम हुये हैं,
और होते ही रहेंगे ज़िन्दगी भर,
पर न आयेगी कभी यह रात फिर से,
पर मिलोगी फिर न तुम जीवन-डगर पर,

इसलिये यदि द्वार आये मुक्ति भी तो
बेइजाज़त आज वह भी लौट जाये।
चाँद से कह दो नही वह मुस्कराये ॥

२७

अभी न जाओ प्राण ! प्राण मे प्यास शेष है,
प्यास शेष है ।

अभी वरुनियो के कुन्जों मे छितरी छाया,
पलक-पात पर थिरक रही रजनी की माया,
श्यामल यमुना सी पुतली के कालीदह मे
अभी रहा फुफकार नाग बौखल बौराया,
अभी प्राण-वसीवट मे बज रही बँसुरिया,
अधरों के तट पर चुम्बन का रास शेष है ।
अभी न जाओ प्राण ! प्राण मे प्यास शेष है,
प्यास शेष है ।

अभी स्पर्श से सेज सिहर उठती है सरा-सरा,
गल-माला के फूल फूल में पुलकित कम्पन,
खिसक खिसक जाता उरोज से अभी लाज-पट,
अंग अंग में अभी अनंग-तरंगित-कर्षण,
केलि-भवन के तरुण दीप की लघु-शिखा पर,
अभी शलभ के जलने का उन्माद शेष है।
अभी न जाओ प्राण ! प्राण में प्यास शेष है,
प्यास शेष है।

अगरु-धूप में मस्त कक्ष का कोना कोना,
सजग द्वार पर निशि-प्रहरी सुकुमार सलोना,
अभी खोलने में रुनझुन करते [illegible] के पट
देखो [illegible] अभी विरह का चन्द्र-खिलौना,
रजत चाँदनी के खुमार में [illegible] [illegible]–
आँगन की आँखों में नीलाकाश शेष है।
अभी न जाओ प्राण ! प्राण में प्यास शेष है,
प्यास शेष है।

अभी लहर तट के आलिंगन में है डूबी,
अलिनी नील कमल के [illegible] [illegible] में [illegible],
पवन पेड़ की डालों पर [illegible] का [illegible],
अभी तारकों के [illegible] [illegible] [illegible],
एक नशा सा व्याप्त [illegible] है [illegible] [illegible],
अभी दृष्टि में एक [illegible] शेष है।
अभी न जाओ प्राण ! प्राण में प्यास शेष है,
प्यास शेष है।

अभी मृत्यु सी शान्ति पड़े सूने पथ सारे,
अभी न ऊषा ने खोले प्राची के द्वारे,
अभी मौन तरु-नीड, सुप्त पनघट, नौकातट,
अभी कारवाँ के न जगे सपने निंदियारे,
अभी दूर है प्रात, रात के प्रणय-पत्र में—
बहुत सुनाने सुनने को इतिहास शेष, है ।
अभी न जाओ प्राण ! प्राण में प्यास शेष है,
प्यास शेष है ॥

३८

मगर निठुर न तुम रुके, मगर निठुर न तुम रुके !

पुकारता रहा हृदय, पुकारते रहे नयन,
पुकारती रही सुहाग-दीप की किरन किरन,
निशा-दिशा, मिलन विरह विदग्ध टेरते रहे,
कराहती रही सलज्ज सेज की शिकन शिकन,
असंख्य श्वास बन समीर पथ बुहारते रहे,
मगर निठुर न तुम रुके !

पकड चरण लिपट गये अनेक अश्रु धूल से,
गुँथे सुवेश केश मे अशेष स्वप्न फूल से,
अनाम कामना शरीर छाँह बन चली गई,
गया हृदय सदय बँधा विंधा चपल दुकूल से,
विलस विलस जला शलभ समान रूप अधजला,
मगर निठुर न तुम रुके !

विफल हुई समस्त साधना अनादि अर्चना,
असत्य सृष्टि की कथा, असत्य स्वप्न-कल्पना,
मिलन बना विरह, अकाल मृत्यु चेतना बनी,
अमृत हुआ गरल, भिखारिणी अलभ्य भावना,
सुहाग-शीश-फूल टूट धूल मे गिरा मुरझ—
मगर निठुर न तुम रुके !

न तुम रुके, रुके न स्वप्न रूप-रात्रि-गेह में,
न गीत-दीप जल सके अजस्र-अश्रु-मेह मे,
धुँआ धुँआ हुआ गगन, धरा बनी ज्वलित चिता,
अँगार सा जला प्रणय अनंग-अंक-देह मे,
मरण-विलास-रास-प्राण-कूल पर रचा उठा,
मगर निठुर न तुम रुके !

अकाश मे न चाँद अब, न नीद रात में रही,
न साँझ में शरम, प्रभा न अब प्रभात मे रही,
न फूल मे सुगन्ध, पात में न स्वप्न नीड के,
सँदेस की न बात वह वसन्त-वात मे रही,
हठी असह्य सौत यामिनी बनी तनी रही—
मगर निठुर न तुम रुके।

पकड चरण लिपट गये अनेक अश्रु धूल से,
गुँथे सुवेश वेश मे अशेष स्वप्न फूल से,
अनाम कामना शरीर छाँह बन चली गई,
गया हृदय सदय बँधा बिंधा चपल दुकूल से,
विलख विलख जला शलभ समान रूप अधजला,
मगर निठुर न तुम रुके !

विफल हुई समस्त साधना अनादि अर्चना,
असत्य सृष्टि की कथा, असत्य स्वप्न-कल्पना,
मिलन बना विरह, अकाल मृत्यु चेतना बनी,
अमृत हुआ गरल, भिखारिणी अलभ्य भावना,
सुहाग-शीश-फूल टूट धूल मे गिरा मुरझ—
मगर निठुर न तुम रुके ।

न तुम रुके, रुके न स्वप्न रूप-रात्रि-गेह मे,
न गीत-दीप जल सके अजस्र-अश्रु-मेह मे,
धुँआ धुँआ हुआ गगन, धरा बनी ज्वलित चिता,
अँगार सा जला प्रणय अनग-अक-देह मे,
मरण-विलास-रास-प्राण-कूल पर रचा उठा,
मगर निठुर न तुम रुके !

अकाश मे न चाँद अब, न नीद रात मे रही,
न साँझ मे शरम, प्रभा न अब प्रभात मे रही,
न फूल मे सुगन्ध, पात मे न स्वप्न नीड के,
सँदेस की न बात वह वसन्त-वात मे रही,
हठी असह्य सौत यामिनी बनी तनी रही—
मगर निठुर न तुम रुके ।

पकड चरण लिपट गये अनेक अश्रु धूल से,
गुँथे सुवेश केश मे अशेष स्वप्न फूल से,
अनाम कामना शरीर छाँह बन चली गई,
गया हृदय सदय बँधा बिंधा चपल दुकूल से,
विलख विलख जला शलभ समान रूप अधजला,
मगर निठुर न तुम रुके !

विफल हुई समस्त साधना अनादि अर्चना,
असत्य सृष्टि की कथा, असत्य स्वप्न-कल्पना,
मिलन बना विरह, अकाल मृत्यु चेतना बनी,
अमृत हुआ गरल, भिखारिणी अलभ्य भावना,
सुहाग-शीश-फूल टूट धूल मे गिरा सुरभ—
मगर निठुर न तुम रुके !

न तुम रुके, रुके न स्वप्न रूप रात्रि-गेह मे,
न गीत-दीप जल सके अजस्र-अश्रु-मेह मे,
धुँआ धुँआ हुआ गगन, धरा बनी ज्वलित चिता,
अँगार सा जला प्रणय अनग-अक-देह में,
मरण-विलास-रास-प्राण-कूल पर रचा उठा,
मगर निठुर न तुम रुके !

प्रकाश में न चाँद अब, न नींद रात में रही,
न साँझ में शरम, प्रभा न अब प्रभात में रही,
न फूल में सुगन्ध, पात में न स्वप्न नीड़ के,
सँदेस की न बात वह वसन्त-वात में रही,
हठी असह्य सौत यामिनी बनी तनी रही—
मगर निठुर न तुम रुके !

पकड चरण लिपट गये अनेक अश्रु धूल से,
गुँथे सुवेश केश मे अशेष स्वप्न फूल से,
अनाम कामना शरीर छाँह बन चली गई,
गया हृदय सदय बँधा विधा चपल दुकूल से,
बिलख बिलख जला शलभ समान रूप अधजला,
मगर निठुर न तुम रुके !

विफल हुई समस्त साधना अनादि अर्चना,
असत्य सृष्टि की कथा, असत्य स्वप्न-कल्पना,
मिलन बना विरह, अकाल मृत्यु चेतना बनी,
अमृत हुआ गरल, भिखारिणी अलभ्य भावना,
सुहाग-शीश-फूल टूट धूल में गिरा सुरभ—
मगर निठुर न तुम रुके !

न तुम रुके, रुके न स्वप्न रूप-रात्रि-गेह मे,
न गीत-दीप जल सके अजस्र-अश्रु-मेह मे,
धुँआ धुँआ हुआ गगन, धरा बनी ज्वलित चिता,
अँगार सा जला प्रणय अनग-अक-देह मे,
मरण-विलास-रास-प्राण-कूल पर रचा उठा,
मगर निठुर न तुम रुके !

अकाश मे न चाँद अब, न नीद रात मे रही,
न साँझ मे शरम, प्रभा न अब प्रभात मे रही,
न फूल मे सुगन्ध, पात मे न स्वप्न नीड के,
सँदेस की न बात वह वसन्त-वात मे रही,
हठी असह्य सौत यामिनी बनी तनी रही—
मगर निठुर न तुम रुके ।

नारी···

४०

अर्ध सत्य तुम, अर्ध स्वप्न तुम, अर्ध निराशा-आशा,
अर्ध अजित-जित, अर्ध तृप्ति तुम, अर्ध अतृप्ति-पिपासा,
आधी काया आग तुम्हारी, आधी काया पानी,
अर्धांगिनि नारी ! तुम जीवन की आधी परिभाषा ।

४१

यदि मैं होता घन सावन का ।

पिया पिया कह मुझको भी पपिहरी बुलाती कोई,
मेरे हित भी मृग-नयनी निज सेज सजाती कोई,
निरख मुझे भी थिरक उठा करता मन-मोर किसी का,
श्याम-संदेसा मुझसे भी राधा मँगवाती कोई,
किसी माँग का मोती बनता ढल मेरा भी आँसू,
मैं भी बनता दर्द किसी कवि कालिदास के मन का ।
यदि मैं होता घन सावन का ॥

आगे आगे चलती मेरे ज्योति-परी इठलाती,
झाँक बली के घूँघट से पीछे बहार मुस्काती,
पवन चढ़ाता फूल, बजाता सागर शंख विजय का,
तृषा तृषित जग की पथ पर निज पलकें पाँवड़ बिछाती,
झूम झूम निज मस्त पनसियों की मृदु अँगड़ाई से,
मुझे पिलाती मधुबाला मधु यौवन आकर्षण का ।
यदि मैं होता घन सावन का ॥

४२

अन्तिम बूंद बची मधु की अब जर्जर प्यासे घट जीवन मे।

मधु की लाली से रहता था जहाँ विहँसता सदा सवेरा,
मरघट है वह मदिरालय अब घिरा मौत का सघन अँधेरा,
दूर गये वे पीने वाले जो मिट्टी के जड प्याले मे–
डुबो दिया करते थे हँसकर भाव हृदय का 'मेरा-तेरा',
रूठा वह साकी भी जिसने लहराया मधु-सिन्धु नयन मे।
अन्तिम बूंद बची मधु की अब जर्जर प्यासे घट जीवन में॥

अब न गूंजती है कानो मे पायल की मादक ध्वनि छम छम,
अब न चला करता है सम्मुख जन्म-मरण सा प्यालो का क्रम,
अब न ढुलकती है अधरो से अधरो पर मदिरा की धारा,
जिसकी गति मे वह जाता था भूत, भविष्यत का सब भय, भ्रम,
टूटे वे भुजबन्धन भी अब मुक्ति स्वय वँधती थी जिन मे।
अन्तिम बूंद बची मधु की अब जर्जर प्यासे घट जीवन में॥

जीवन की अन्तिम आशा सी एक बूंद जो बाकी केवल,
संभव है वह भी न रहे जब ढुलके घट मे काल-हलाहल,
यह भी संभव है कि यही मदिरा की अन्तिम बूंद सुनहरी—
ज्वाला बन कर खाक बना दे जीवन के विष की कटु हलचल,
क्योंकि आखिरी बूंद छिपाकर अंगारे रखती दामन मे।
अन्तिम बूंद बची मधु की अब जर्जर प्यासे घट जीवन मे ॥

जब तक बाकी एक बूंद है तब तक घट मे भी मादकता,
मधु से धुलकर ही तो निखरा करती प्याले की सुन्दरता,
जब तक जीवित आस एक भी तभी तलक सांसो में भी गति,
आकर्षण से हीन कभी क्या जो पाई जग में मानवता ?
नीद खुला करती जीवन की आकर्षण की छांह शरण मे।
अन्तिम बूंद बची मधु की अब जर्जर प्यासे घट जीवन मे ॥

आज हृदय मे जाग उठी है यह व्याकुल तृष्णा यौवन की,
इच्छा होती है पी डालूं बूंद आखिरी भी जीवन की,
अधरो तक ले जाकर प्याला किन्तु सोच यह डर जाता हूँ,
इसके बाद चलेगी कैसे गति प्राणो के श्वास-पवन की,
और कौन होगा साथी जो बहलाये मन दिन दुर्दिन में।
अन्तिम बूंद बची मधु की अब जर्जर प्यासे घट जीवन मे ॥

४२

अन्तिम बूँद बची मधु की अब जर्जर प्यासे घट जीवन मे।

मधु की लाली से रहता था जहाँ विहँसता सदा सवेरा,
मरघट है वह मदिरालय अब घिरा मौत का सघन अँधेरा,
दूर गये वे पीने वाले जो मिट्टी के जड प्याले मे–
डुबो दिया करते थे हँसकर भाव हृदय का 'मेरा-तेरा',
रूठा वह साकी भी जिसने लहराया मधु-सिन्धु नयन मे।
अन्तिम बूँद बची मधु की अब जर्जर प्यासे घट जीवन मे ॥

अब न गूँजती है कानो मे पायल की मादक ध्वनि छम छम,
अब न चला करता है सम्मुख जन्म-मरण सा प्यालो का क्रम,
अब न ढुलकती है अधरो से अधरो पर मदिरा की धारा,
जिसकी गति मे बह जाता था भूत, भविष्यत का सब भय, भ्रम,
टूटे वे भुजबन्धन भी अब मुक्ति स्वय बँधती थी जिन मे।
अन्तिम बूँद बची मधु की अब जर्जर प्यासे घट जीवन में ॥

जीवन की अन्तिम आशा सी एक बूंद जो बाकी केवल,
सभव है वह भी न रहे जब ढुलके घट मे काल-हलाहल,
यह भी सभव है कि यही मदिरा की अन्तिम बूंद सुनहली—
ज्वाला बन कर खाक बना दे जीवन के विष की कटु हलचल,
क्योंकि आखिरी बूंद छिपाकर अगारे रखती दामन मे।
अन्तिम बूंद बची मधु की अब जर्जर प्यासे घट जीवन मे॥

जब तक बाकी एक बूंद है तब तक घट मे भी मादकता,
मधु से धुलकर ही तो निखरा करती प्याले की सुन्दरता,
जब तक जीवित श्वास एक भी तभी तलक साँसो मे भी गति,
आकर्षण से हीन कभी क्या जी पाई जग मे मानवता ?
नीद खुला करती जीवन की आकर्षण की छाँह शरण मे।
अन्तिम बूंद बची मधु की अब जर्जर प्यासे घट जीवन मे॥

आज हृदय मे जाग उठी है वह व्याकुल तृष्णा यौवन की,
इच्छा होती है पी डालूं बूंद आखिरी भी जीवन की,
अधरो तक ले जाकर प्याला किन्तु सोच यह रुक जाता हूँ,
सके बाद चलेगी कैसे गति प्राणो के श्वास-पवन की,
र कौन होगा साथी जो बहलाये मन दिन दुर्दिन मे।
न्तिम बूंद बची मधु की अब जर्जर प्यासे घट जीवन मे॥

आज न तुम वह, आज न मैं वह, आज न वे सपनो के बादल,
आज न वे चुम्बन-आलिंगन, आज न वह प्राणो मे हलचल,
काल-पराजित गलबहियाँ वे, भृकुटि-विलास हुए अन्तर्हित,
वे मोती सी रातें बीती, वे हीरो से दिवस गये ढल,
समय भुला देता है सब कुछ, इसीलिए तो प्रेयसि मेरा—
है भर गया घाव दिल का, पर हाय निशान अभी बाकी है।
स्वप्न मिटे सब लेकिन सपनो का अभिमान अभी बाकी है॥

वह आई बरसात कि सीमा तोड नयन-सागर लहराया,
सुख-दुख डूबे, सपने डूबे, डूबे प्राण, न कुछ बच पाया,
वे तडकी बिजलियाँ कि लोचन अब तक खुल खुल झप जाते हैं,
ऐसा टूटा बच्च कि तब से हाय न मैं अब तक सो पाया,
और आज अब शेष न वह बरसात, न बादल, बिजली, ओले,
घुमड रहा नयनो मे पर सुधि का तूफान अभी बाकी है।
स्वप्न मिटे सब लेकिन सपनो का अभिमान अभी बाकी है॥

आँसू आज बहाता है तू मेरे मन अपने दुर्दिन पर,
लेकिन यह तो सोच कि किसका साथ दिया सुख ने जीवन भर,
सुख दुख देने को आता है, सपने मिटने को बनते हैं,
'आने-जाने, बनने-मिटने' का ही नाम जगत यह सुन्दर,
अरे हुआ क्या यदि तेरा सुख-स्वप्न-स्वर्ग ढह गया अचानक,
करने को निर्माण मगर जग मे वीरान अभी बाकी है।
स्वप्न मिटे सब लेकिन सपनो का अभिमान अभी बाकी है॥

ऊबड़ खाबड़ पन्थ, घिरा है चारों ओर सघन अँधियारा,
नीचे धरती दूभर, ऊपर गरज रहा है अम्बर सारा,
सूनेपन का साथी कर का दीपक भी बुझ गया अचानक,
और डुबाने बढ़ी आ रही नयनों में आँसू की धारा,
आज न कोई मीत साथ दे जो इस पथ पर, लेकिन प्यारे !
हरदम तेरे साथ कंठ में तेरा गान अभी बाक़ी है।
स्वप्न मिटे सब लेकिन सपनों का अभिमान अभी बाक़ी है ॥

४५

भूल पाओ तो मुझे तुम भूल जाना ।

साथ देखा था कभी जो एक तारा,
आज भी अपनी डगर का वह सहारा,
आज भी हैं देखते हम तुम उसे पर
है हमारे बीच गहरी अश्रु-धारा,
नाव चिर जर्जर नहीं पतवार कर में
किस तरह फिर हो तुम्हारे पास आना ।
भूल पाओ तो मुझे तुम भूल जाना ।

सोच लेना पन्थ भूला एक राही,
लख तुम्हारे हाथ में मधु की सुराही,
एक मधु की बूँद पाने के लिये बस,
रुक गया था भूल जीवन की दिशा ही,
आज फिर पथ ने पुकारा जा रहा वह,
कौन जाने अब कहाँ पर हो ठिकाना ।
भूल पाओ तो मुझे तुम भूल जना !

चाहता है कौन अपना स्वप्न टूटे ?
चाहता है कौन पथ का साथ छूटे ?
रूप की अठखेलियाँ किसको न भाती,
चाहता है कौन मन का मीत रूठे ?
छूटता है साथ सपने टूटते पर,
क्योंकि दुश्मन प्रेमियों का है जमाना !
भूल पाम्रो तो मुझे तुम भूल जाना !

यदि कभी हम फिर मिलें जीवन-डगर पर,
मैं लिये आँसू, लिये तुम हास मनहर,
बोलना चाहो नहीं तो बोलना मत,
देख लेना किन्तु मेरी ओर क्षण भर,
क्योंकि मेरी राह की मंज़िल तुम्हीं हो,
और जीने का तुम्हीं तो हो बहाना !
भूल पाम्रो तो मुझे तुम भूल जाना !

साँझ जब दीपक जलायेगी गगन में,
रात जब सपने सजायेगी नयन में,
पी यहीं जब जब पुकारेगा पपीहा,
मुस्करायेगी कली जब जब चमन में,
मैं तुम्हारी याद कर रोता रहूँगा,
किन्तु मेरी याद कर तुम मुस्कराना।
भूल पाम्रो तो मुझे तुम भूल जाना !

जिसने दे मधु मुझे बनाया था पीने का चिर अभ्यासी,
आज वही विष दे मुझको देखता कि तृष्णा कितनी प्यासी,
करता हूँ इनकार अगर तो लज्जित मानवता होती है,
अस्तु मुझे पीना ही होगा विष बनकर विष का विश्वासी,
और अगर है प्यास प्रबल, विश्वास अटल तो यह निश्चित है
कालकूट ही यह देगा शुभ स्थान मुझे शिव के आसन का।
बन्द करो मधु की रस-बतियाँ, जाग उठा अब विष जीवन का ॥

आज पिया जब विष तब मैंने स्वाद सही मधु का पाया है,
नीलकंठ बनकर ही जग में सत्य हमेशा मुस्काया है,
सच तो यह है मधु-विष दोनों एक तत्व के भिन्न नाम दो
धर कर विष का रूप, बहुत संभव है, फिर मधु ही आया है,
जो सुख मुझे चाहिये था जब मिला वहीं एकाकीपन में
फिर लूँ क्यों अहसान व्यर्थ मैं साकी की चंचल चितवन का।
बन्द करो मधु की रस-बतियाँ, जाग उठा अब विष जीवन का ॥

निभाना ही कठिन है...

४७

प्यार करना तो बहुत आसान प्रेयसि !
अन्त तक उसका निभाना ही कठिन है।

है बहुत आसान ठुकराना किसी का,
है न मुश्किल भूल भी जाना किसी को,
प्राण-दीपक बीच साँसो की हवा में
याद की बाती जलाना ही कठिन है।
प्यार करना तो बहुत आसान प्रेयसि !
अन्त तक उसका निभाना ही कठिन है।

स्वप्न बन क्षण भर किसी स्वप्निल नयन के,
ध्यान-मन्दिर मे किसी मीरा-मगन के
देवता बनना' नहीं मुश्किल, मगर गय-
भार पूजा का उठाना ही कठिन है।
प्यार करना तो बहुत आसान प्रेयसि !
अन्त तक उसका निभाना ही कठिन है।

पाकर निशि का तम, सूनापन,
जब शशि की एक शरीर किरन
सोते फूलों के गालों को हलके हलके सहलाती है।
तब याद किसी की आती है ॥

उस पार उतारा करती नित,
जो जग के नर-नारी अगणित,
निशि को जब वही नाव सूनी इस पार पड़ी अकुलाती है।
तब याद किसी की आती है ॥

उन्मुक्त झरोखे से आकर,
सिर, मस्तक मेरा सहला कर
जब प्रात उषा की किरन एक सोते से मुझे जगाती है।
तब याद किसी की आती है ॥

४६

प्यार सभी करते जग में पर
सब को प्यार नहीं मिलता है।

अथक प्रतीक्षा में ऋतुपति की
सभी निकुञ्ज कुञ्ज उपवन वे,
पत्रहीन-फल-फूलहीन हो,
सहते दार पतझार-पवन के,
पर कुंकुम सिन्दूर लिये जब दूल्हा बन बसन्त आता है
तब हर डाली को, हर बगिया को शृंगार नहीं मिलता है।
सब को प्यार नहीं मिलता है॥

यद्यपि सभी भक्त मन्दिर में
एक भावना लेकर जाते,
और एक विधि से वन्दन कर
पूजा पर सर्वस्व चढ़ाते,
देने को वरदान मगर जब होता है तैयार देवता
तब सब की पूजा को मन्दिर में सत्कार नहीं मिलता है।
सब को प्यार नहीं मिलता है॥

[illegible]
पाकर निशि का तम, सूनापन,
जब शशि की एक शरीर किरन
सोते फूलों के गालों को हलके हलके सहलाती है।
तब याद किसी की आती है॥

उस पार उतारा करती नित,
जो जग के नर-नारी अगणित,
निशि को जब वही नाव सूनी इस पार पडी अकुलाती है।
तब याद किसी की आती है॥

उन्मुक्त झरोखे से आकर,
सिर, मस्तक मेरा सहला कर
जब प्रात उषा की किरन एक सोते से मुझे जगाती है।
तब याद किसी की आती है॥

४६

प्यार सभी करते जग में पर
सब को प्यार नहीं मिलता है।

अथक प्रतीक्षा में ऋतुपति की
सभी निकुञ्ज कुञ्ज उपवन वे,
पत्रहीन-फल-फूलहीन हो,
सहते घार पतझार-पवन के,
पर कुंकुम सिन्दूर लिये जब दूल्हा बन बसन्त आता है
तब हर डाली को, हर बगिया को शृंगार नहीं मिलता है।
सब को प्यार नहीं मिलता है॥

यद्यपि सभी भक्त मन्दिर में
एक भावना लेकर जाते,
और एक विधि से वन्दन कर
पूजा पर सर्वस्व चढ़ाते,
देने को वरदान मगर जब होता है तैयार देवता
तब सब की पूजा को मन्दिर में सत्कार नहीं मिलता है।
सब को प्यार नहीं मिलता है॥

कैसी जीवन की विडम्बना
है कितनी अपनी लाचारी ?
लगा दाँव पर तन मन भी हम
जीत न पाते बाज़ी हारी,
सर्वस देकर भी न हमे मिलती मुट्ठी भर धूल किसी से
अमृत लुटाकर भी विष पीने का अधिकार नही मिलता है।
सब को प्यार नही मिलता है॥

पूँछ रहा मैं आज स्वय से
आखिर क्या इसका कारण है,
प्यास सभी की एक जगत मे
पर न सुधा का सम वितरण है,
चलने को तो सब को मिल जाती हैं राहे और मुश्किलें,
पर हर पन्थी को मजिल का दरस–दुलार नही मिलता है।
सब को प्यार नही मिलता है॥

सीमित जग का कोष, असीमित–
है जड–चेतन की अभिलाषा,
इसीलिये आशा करके भी
मिलती हमको सदा निराशा,
कभी कभी तो लहरें खुद हमको तट पर पहुँचा देती हैं,
कभी डूबने को भी सागर मे मँझधार नही मिलता है।
सबको प्यार नही मिलता है॥

५०

मैं तुम्हें अपना बनाना चाहता हूँ।

अजनबी यह देश, अनजानी यहाँ की हर डगर है,
बात मेरी क्या—यहाँ हर एक खुद से बेखबर है
किस तरह मुझको बनाले सेज का सिन्दूर कोई
जब कि मुझको ही नहीं पहचानती मेरी नजर है,
आँख में इससे बसाकर मोहिनी मूरत तुम्हारी
मैं सदा को ही स्वयं को भूल जाना चाहता हूँ
मैं तुम्हें अपना बनाना चाहता हूँ ॥

दीप को अपना बनाने को पतंगा जल रहा है,
बूँद बनने को समुन्दर को हिमालय गल रहा है,
प्यार पाने को धरा का मेघ है व्याकुल गगन में,
चूमने को मृत्यु निशि-दिन श्वास-पन्थी चल रहा है,
है न कोई भी अकेला राह पर गतिमय इसी से
मैं तुम्हारी आग में तन मन जलाना चाहता हूँ।
मैं तुम्हें अपना बनाना चाहता हूँ।

देखता हूँ एक मौन अभाव सा ससार भर मे,
सब विसुध, पर रिक्त प्याला एक है हर एक कर मे,
भोर की मुस्कान के पीछे छिपी निशि की सिसकियाँ,
फूल है हँसकर छिपाये शूल को अपने जिगर मे,
इसलिये ही मै तुम्हारी आँख के दो बूँद जल मे
यह अधूरी जिन्दगी अपनी डुबाना चाहता हूँ।
मै तुम्हे अपना बनाना चाहता हूँ ॥

वे गये विष दे मुझे मैंने हृदय जिनको दिया था,
शत्रु हैं वे प्यार खुद से भी अधिक जिनको किया था,
हँस रहे वे याद मे जिनकी हजारो गीत रोये,
वे अपरिचित हैं जिन्हे हर साँस ने अपना लिया था,
इसलिये तुमको बनाकर आँसुओ की मुस्कराहट,
मै समय की क्रूर गति पर मुस्कराना चाहता हूँ।
मैं तुम्हे अपना बनाना चाहता हूँ ॥

दूर जब तुम थे, स्वय से दूर मैं तब जा रहा था,
पास तुम आये जमाना पास मेरे आ रहा था
तुम न थे तो कर सकी थी प्यार मिट्टी भी न मुझको,
सृष्टि का हर एक कण मुझ मे कमी कुछ पा रहा था,
पर तुम्हे पाकर, न अब कुछ शेष है पाना इसी से
मैं तुम्ही से, बस तुम्ही से लौ लगाना चाहता हूँ।
मैं तुम्हे, केवल तुम्हे अपना बनाना चाहता हूँ ॥

५१

अब न आऊँगा तुम्हारे द्वार।

जब तुम्हारी ही हृदय में याद हर दम,
लोचनों में जब सदा बैठे स्वयं तुम,
फिर अरे क्या देव, दानव क्या, मनुज क्या ?
मैं जिसे पूजूँ जहाँ भी तुम वहीं साकार।
किस लिये आऊँ तुम्हारे द्वार ?

क्या कहा—'सपना वहाँ साकार होगा,
मुक्ति भी अमरत्व पर अधिकार होगा',
किन्तु मैं तो देव ! अब उस लोक में हूँ
है जहाँ करती अमरता मर्त्य का शृंगार।
क्या करूँ आकर तुम्हारे द्वार ?

देखता हूँ एक मौन अभाव सा ससार भर मे,
सब विसुध, पर रिक्त प्याला एक है हर एक कर में,
भोर की मुस्कान के पीछे छिपी निशि की सिसकियाँ,
फूल है हँसकर छिपाये शूल को अपने जिगर में,
इसलिये ही मै तुम्हारी आँख के दो बूँद जल मे
यह अधूरी जिन्दगी अपनी डुबाना चाहता हूँ।
मैं तुम्हे अपना बनाना चाहता हूँ॥

वे गये विष दे मुझे मैंने हृदय जिनको दिया था,
शत्रु हैं वे प्यार खुद से भी अधिक जिनको किया था,
हँस रहे वे याद मे जिनकी हजारो गीत रोये,
वे अपरिचित हैं जिन्हे हर सांस ने अपना लिया था,
इसलिये तुमको बनाकर आँसुओ की मुस्कराहट,
मै समय की क्रूर गति पर मुस्कराना चाहता हूँ।
मै तुम्हें अपना बनाना चाहता हूँ॥

दूर जब तुम थे, स्वयं से दूर मै तब जा रहा था,
पास तुम आये जमाना पास मेरे आ रहा था
तुम न थे तो कर सकी थी प्यार मिट्टी भी न मुझको,
सृष्टि का हर एक कण मुझ मे कमी कुछ पा रहा था,
पर तुम्हे पाकर, न अब कुछ शेष है पाना इसी से
मैं तुम्ही से, बस तुम्ही से लौ लगाना चाहता हूँ।
मैं तुम्हें, केवल तुम्हें अपना बनाना चाहता हूँ॥

५१

अब न आऊँगा तुम्हारे द्वार।

जब तुम्हारी ही हृदय में याद हर दम,
लोचनों में जब सदा बैठे स्वयं तुम,
फिर अरे क्या देव, दानव क्या, मनुज क्या ?
मैं जिसे पूजूँ जहाँ भी तुम वहीं साकार।
किस लिये आऊँ तुम्हारे द्वार ?

क्या कहा—'सपना वहाँ साकार होगा,
मुक्ति को अमरत्व पर अधिकार होगा',
किन्तु मैं तो देव ! अब उस लोक में हूँ
है जहाँ करती अमरता मर्त्य का शृंगार।
क्या करूँ आकर तुम्हारे द्वार ?

तृप्ति-घट दिखला मुझे मत दो प्रलोभन,
मत डुबाओ हास मे ये अश्रु के कण,
क्यो कि ढल ढल अश्रु मुझ से कह गये है
'प्यास मेरी जीत, मेरी तृप्ति ही हार !'
मत कहो—आओ हमारे द्वार।

आज मुझ मे तुम, तुम्ही मे मैं हुआ लय,
अब न अपने बीच कोई भेद-सशय,
क्यो कि तिल तिल कर गला दी प्राण ! मैंने
थी खडी जो बीच अपने चाह की दीवार।
व्यर्थ फिर आना तुम्हारे द्वार ॥

दूर कितने भी रहो तुम पास प्रतिपल,
क्यो कि मेरी साधना ने पल-निमिष चल
कर दिये केन्द्रित सदा को ताप—बल से
विश्व में तुम, औरतुम में विश्व भर का प्यार।
हर जगह ही अब तुम्हारा द्वार

अब तुम रूठो…

५२

अब तुम रूठो, रूठे सब ससार, मुझे परवाह नहीं है।

दीप, स्वयं बन गया शलभ अब जलते जलते,
मंज़िल ही बन गया मुसाफिर चलते चलते,
गाते गाते गेय हो गया गायक ही खुद,
सत्य स्वप्न ही हुआ स्वयं को छलते छलते,
डूबे जहाँ वहीं भी तरी यही अब तट है,
अब चाहे हर लहर बने मँझधार मुझे परवाह नहीं है।
अब तुम रूठो, रूठे सब संसार, मुझे परवाह नहीं है।

अब पंछी को नहीं बसेरे की है आशा,
और बागबाँ को न बहारों की अभिलाषा,
अब हर दूरी पास, दूर है हर समीपता,
एक मुझे लगती अब सुख दुख की परिभाषा,
अब न अोठ पर हँसी, न आँखों में हैं आँसू,
अब तुम फेंको मुझ पर रोज अंगार, मुझे परवाह नहीं है।
अब तुम रूठो, रूठे सब संसार, मुझे परवाह नहीं है।

५२

अब तुम रूठो, रूठे सब संसार, मुझे परवाह नहीं है।

दीप, स्वयं बन गया शलभ अब जलते जलते,
मंजिल ही बन गया मुसाफिर चलते चलते,
गाते गाते गेय हो गया गायक ही खुद,
सत्य स्वप्न ही हुआ स्वयं को छलते छलते,
डूबे जहाँ कहीं भी तरी वहीं अब तट है,
अब चाहे हर लहर बने मँझधार मुझे परवाह नहीं है।
अब तुम रूठो, रूठे सब संसार, मुझे परवाह नहीं है।

अब पंछी भी नहीं बसे
और वाणयाँ भी न यहाँ
अब हर दूरी पास, दूर।
एक मुझे लगती अब सुख।
अब न ओठ पर हँसी, न
अब तुम फेंको मुझ पर रोज
अब तुम रूठो, रूठे सब

अब मेरी आवाज़ मुझे टेरा करती है,
अब मेरी दुनियाँ मेरे पीछे फिरती है,
देखा करती है मेरी तस्वीर मुझे अब,
मेरी ही चिर प्यास अमृत मुझ पर झरती है,
अब मै खुद को पूज, पूज तुमको लेता हूँ,
बन्द रखो अब तुम मन्दिर के द्वार, मुझे परवाह नही है।
अब तुम रूठो, रूठे सब ससार, मुझे परवाह नही है।

अब हर एक नजर पहचानी सी लगती है,
अब हर एक डगर कुछ जानी सी लगती है,
बात किया करता है अब सूनापन मुझसे,
टूट रही हर साँस कहानी सी लगती है,
अब मेरी परछाँई तक मुझ से न अलग है,
अब तुम चाहे करो घृणा या प्यार, मुझे परवाह नही है।
अब तुम रूठो, रूठे सब ससार, मुझे परवाह नहीं है।